अप्रैल-सितम्बर, 2025 (संयुक्तांक)

ISSN- 2455-1309

साहित्य भारती

कहानी विशेषांक

उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ

संस्थान के महत्त्वपूर्ण प्रकाशन

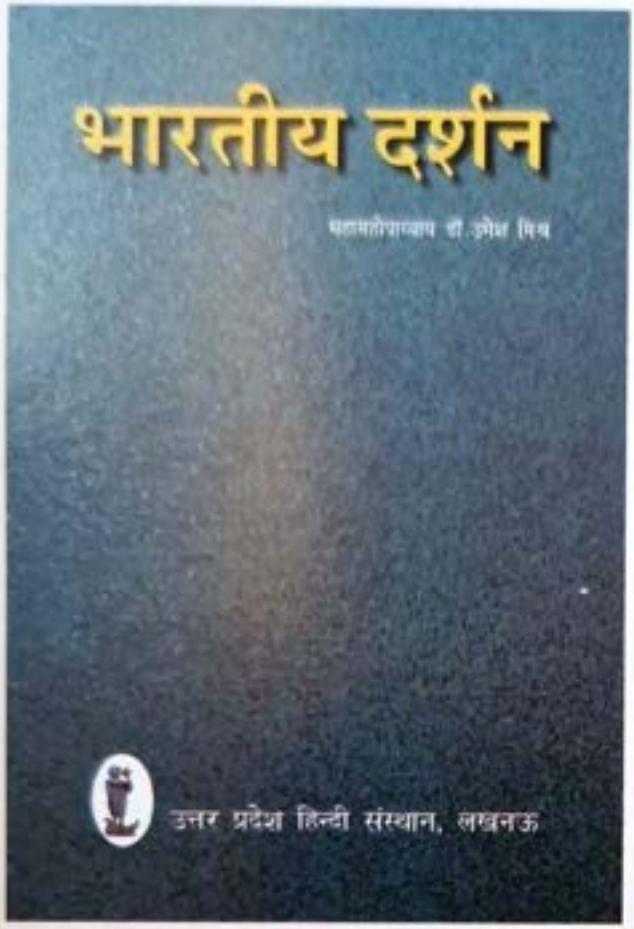

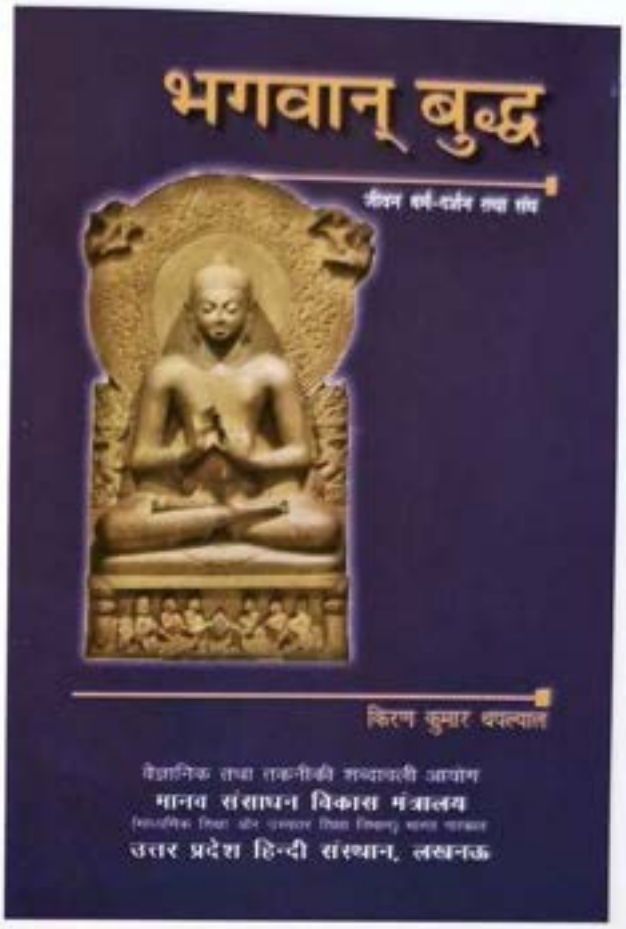

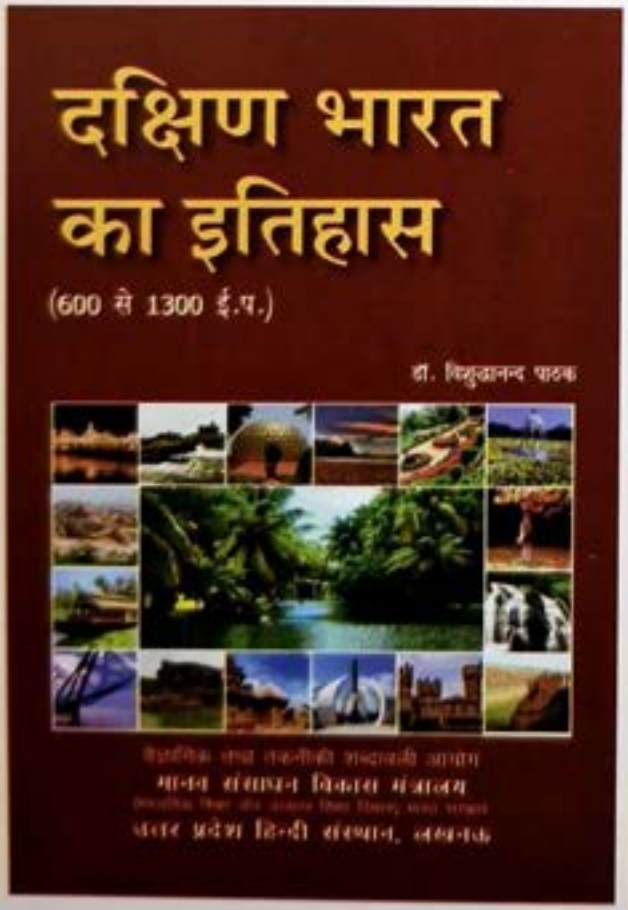

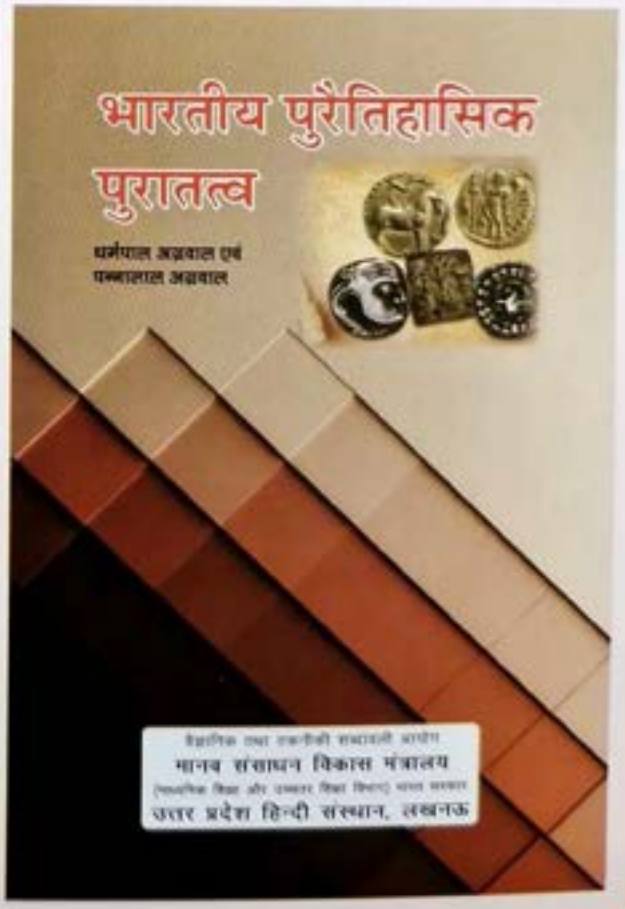

साहित्य भारती

प्रबन्ध सम्पादक

निदेशक

सम्पादक

डॉ. अमिता दुबे

उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ

साहित्य भारती

त्रैमासिक
वर्ष : 28, अंक : 2–3
अप्रैल–सितम्बर, 2025 (संयुक्तांक)

सम्पादकीय कार्यालय
राजर्षि पुरुषोत्तमदास टण्डन हिन्दी भवन
6, महात्मा गाँधी मार्ग,
हजरतगंज, लखनऊ–226 001
email : sahityabharti1976@gmail.com

पत्रिका प्राप्ति–स्थान
पुस्तक विक्रय–केन्द्र
राजर्षि पुरुषोत्तमदास टण्डन हिन्दी भवन
6, महात्मा गाँधी मार्ग,
हजरतगंज, लखनऊ–226 001
दूरभाष : 0522–2614470

साहित्य भारती शुल्क

एक प्रति : रु0 25.00, वार्षिक शुल्क : रु0 100.00
आजीवन शुल्क : रु0 3,000.00
सदस्यता शुल्क : निदेशक, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान के नाम से ड्राफ्ट/एटपार चेक द्वारा

पत्रिका में प्रकाशित रचनाओं में लेखकों के विचार उनके अपने हैं,
उनके विचारों से सम्पादक की सहमति आवश्यक नहीं है।

सम्पादकीय

कहानी की कहानी

जून 1927 को रॉयल लिटरेरी सोसाइटी में सुप्रसिद्ध साहित्यकार रडयार्ड किपलिंग ने एक महत्त्वपूर्ण बात कही थी -

कल्पना सत्य की बड़ी बहन है। स्पष्टतः जब तक किसी ने कहानी नहीं कही थी तब तक संसार में कोई नहीं जानता था कि सत्य क्या है। अतः यह सबसे प्राचीन कला है, यह इतिहास की जननी है।

इतिहास को अपने गर्भ में धारण करने वाली कहानी कभी-कभी इतिहास से आगे निकल जाती है क्योंकि इतिहासकार सत्य घटनाओं को चित्रित करता है उसके पास तथ्यों के अलावा कुछ नहीं होता लेकिन साहित्यकार जब उस सत्य घटना का वर्णन अपनी किसी अभिव्यक्ति में करता है तब उसके पास कल्पना की उड़ान के साथ शब्दों की सम्पदा भी होती है भावों की अभिव्यक्ति में वह ऐसा ताना-बाना बुनता है कि 'झीनी-झीनी बीनी चदरिया' बन जाती है और बाँग्ला के जगत प्रसिद्ध लेखक शरत् चन्द को कहना पड़ता है-

'कसौटी पर कसे गये बिना जीवन की परख नहीं होती' और पढ़कर आनन्द के अतिरेक से आँखें यदि गीली न हो जायें तो वह कहानी कैसी?'

कथाकार प्रेमचन्द कहते हैं-

'साहित्यकार का काम केवल पाठकों का मन बहलाना नहीं है। यह तो भाटों, मदारियों, विदूषकों और मसखरों का काम है। साहित्यकार का पद इससे कहीं ऊँचा है। वह हमारा पथ-प्रदर्शक होता है, वह हमारे मनुष्यत्व को जगाता है, हममें सद्भावों का संचार करता है हमारी दृष्टि को फैलाता है।'

दृष्टि का यही फैलाव समाज का मार्गदर्शक होता है। प्रेमचन्द जी साहित्यकार को समाज के आगे चलने वाली मशाल का वाहक मानते हैं और स्वीकार करते हैं कि वह साहित्य चिरायु हो सकता है जो मनुष्य

की मौलिक प्रवृत्तियों पर अवलम्बित हो। ईर्ष्या और प्रेम, क्रोध और लोभ अनुराग और विराग, दुख और लज्जा-यह सभी हमारी मौलिक प्रवृत्तियाँ हैं इन्हीं की छटा दिखाना साहित्य का परम उद्देश्य है। बिना उद्देश्य के तो कोई रचना हो ही नहीं सकती।

साहित्य कोरी कल्पना भी नहीं है उसका सम्बन्ध बौद्धिकता से भी है क्योंकि मनुष्य में न केवल बुद्धि होती है और न केवल भावुकता-वह इन दोनों का सम्मिश्रण है इसलिए साहित्य में इन दोनों का मिश्रण आवश्यक है। बुद्धिवाद साहित्य को गहराई प्रदान करता है परन्तु यदि कहानी में भावुकता नहीं है तो वह केवल मस्तिष्क के लिए बुद्धिवाद बनकर रह जाएगी और किसी को आकर्षित नहीं करेगी। रोना-हँसना-मुस्कुराना-क्रोध करना ये सभी भावुक हृदय की अभिव्यक्ति हैं कहानी में इन सभी संचारी भावों का समावेश अनिवार्य है क्योंकि प्रेमचन्द के शब्दों में कहें तो इन भावों के बिना सूखा साहित्य अगर अमृत भी हो तो पड़ा-पड़ा भाप बनकर उड़ जाएगा।

कहानी की कहानी दादी-नानी की कहानी से आगे बढ़कर मनुष्य से मनुष्य की कहानी बन गई है। साहित्य की सभी विधाओं में सर्वाधिक पढ़ी जाने विधा कहानी के सम्बन्ध में जायसी की पंक्तियाँ महत्त्वपूर्ण हो जाती हैं जो पद्मावत के माध्यम से सामने आती है-

केइँ न जगत जस बेचा केइँन लीन्ह जस मोल।
जो यह पढ़ै कहानी हम सँवरै दुइ बोल।।

साहित्य भारती का यह अंक 'कहानी विशेषांक' के रूप में प्रकाशित करते हुए हमें अत्यन्त हर्ष की अनुभूति हो रही है। आशा ही नहीं पूर्ण विश्वास है कि इसमें प्रकाशित कहानियाँ पाठकों का न केवल ध्यान आकृष्ट करेंगी वरन् कुछ विचारने को भी विवश करेंगी। आपकी प्रतिक्रियाएँ हमारा पाथेय हैं।

डॉ. अमिता दुबे
प्रधान संपादक
मो. 9415551878

साहित्य भारती

अनुक्रम

लौटती धार	सुभाष चन्द्र गांगुली	1
अपराध बोध	पुष्पेश कुमार पुष्प	7
कंधे पर गिरगिट	राज नारायण बोहरे	12
सुगन्ध	रेणु उपाध्याय	16
खुशियाँ लौट आयीं	कृष्ण चन्द्र महादेविया	18
दिदिया	रंजना जायसवाल	23
संवाद	डॉ. विभा खरे	28
एनाटॉमी प्रोफेसर	डॉ. चमन टी माहेश्वरी	31
रास्ते	डॉ. शोभा अग्रवाल 'चिलबिल'	38
दोगुना दहेज	शिव मोहन यादव	46
टिटहरी के अण्डे	कीर्ति दीक्षित	51
गुमनाम शिकायतें	देवेन्द्र कुमार मिश्रा	59
जिन्दगी का मकसद	मुकेश कुमार सिंह	65
दुविधा	रूपेन्द्र पटेल	67
परवरिश	अर्चना त्यागी	70
सिद्धान्तवादी	डॉ. प्रेमशंकर द्विवेदी भास्कर	74
छठी इंद्री	अलका प्रमोद	79
जीवन के रंग	कैलाश नारायण सिंह 'करुणम'	85
उदास आँखें	कान्ता रॉय	91
हमारा गाँव	अजय सिंह	100
आत्मबोध	आकांक्षा दीक्षित	111
परिवर्तन	शोभित द्विवेदी	115
प्रतिज्ञा	रमेश मनोहरा	118
कर्त्तव्यनिष्ठ	डॉ. अमिता दुबे	121
अस्तित्व	डॉ. सुधाकर अदीब	125

कहाँ हो तुम	प्रमिला भारती	133
अपनापन	अखिलेश पालरिया	135
कल सूरज जरूर उगेगा	तपेश भौमिक	143
पतरकी माई	डॉ. संजय कुमार मालवीय	147
अन्य भारतीय भाषाओं से		
चाँद हाथ न आया (तेलुगु)	आदूरि वेंकट सीताराम मूर्ति भावा.-पारनंदि निर्मला	151
तुम (पंजाबी)	कुलबीर बड़ेसरा भावा.- घनश्याम रंजन	159
स्वर्ण कणिका (तेलुगु)	जयन्ति पापाराव भावा.- डॉ. एस. शेषारत्नम्	165
नया अंकुर (मराठी)	गंगाधर गाडगिल भावा.- डॉ. मीना राजपूत	170
जवाहरों का सौदागर (मलयालम)	कारूर नीलकण्ठ पिल्लै भावा.- रति सक्सेना	176
सम्पत्ति समर्पण (बाँग्ला)	गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर भावा.-माधवी बन्धोपाध्याय	181
संस्थान समाचार		187

रचनाकारों से

- *'साहित्य भारती' त्रैमासिक के लिए साहित्य की विभिन्न विधाओं की रचनाएँ, लेख, कहानी, कविता आदि आमंत्रित हैं।*
- *रचनाएँ स्पष्ट, हस्तलिपि में अथवा टंकित कागज के एक ओर हों, तथा रचनाकार का सम्पर्क सूत्र यथा पूरा पता, मोबाइल अथवा फोन नम्बर, ई-मेल अवश्य लिखें।*
- *अस्वीकृत रचनाएँ वापस नहीं की जातीं। अतः एक प्रति अपने पास सुरक्षित रखें।*
- *साहित्य भारती में प्रकाशित रचना के मानदेय से पत्रिका की एक वर्ष की सदस्यता दी जाती है। अतः वर्ष में सामान्यतः एक ही रचना प्रकाशित की जाती है।*
- *रचना प्रकाशित होने पर लेखकीय प्रति प्रेषित की जाती है।*
- *प्रकाशित रचना की मौलिकता का सम्पूर्ण दायित्व रचनाकार का होगा।*
- *रचना के साथ अपना बैंक खाते में नाम (अंग्रेजी के बड़े अक्षरों में), निरस्त चेक/बैंक विवरण IFSC कोड सहित भी भेजने का कष्ट करें।*

- सम्पादक

लौटती धार

➲ सुभाष चन्द्र गांगुली

सुजाता के दिन अब फिरते हुए नजर आने लगे। कुछ ही दिनों पहले उसकी शादी की बात पक्की हुई है। पहले मिहिर के माता-पिता ने देखा, कुण्डली मिलायी, फिर मिहिर, उसकी बहन और चाची ने देखा तथा तीसरी और अन्तिम बार मिहिर और उसके मित्रों ने जी भरकर देखा, फोटो खींचें, हँसी-ठिठोली की और जाते समय मिहिर ने स्वयं सुजाता और उसकी माँ से कहा, 'रिश्ता मंजूर है'। पुरोहित ने शुभ मुहूर्त देखा और अगले माघ यानी सात महीने बाद विवाह होना तय हुआ।

सुजाता के माता-पिता, भाई, छोटी बहन सभी बेहद खुश हैं। पूरे घर में उत्सव-सा माहौल है। घर, आँगन, दालान सर्वत्र उत्सव की खुशबू लहरा रही है। सुबह से रात तक सभी की जुबान पर सिर्फ शादी की बात, मिहिर की तारीफ और मिहिर से ज्यादा गुणगान सुजाता के, "जीजू सेर, तो हमारी दीदी सवा सेर, हमसे सहेलियाँ पूछती हैं, दीदी को क्यों नहीं आगे बढ़ने दिया, कितनी तेज थीं, गाना-बजाना, खेलकूद, पढ़ाई-लिखाई सब में अव्वल".... "हमारी बेटी सुजाता क्या मिहिर से कम है? आपने उसे पढ़ने नहीं दिया, वरना अब तक वह किसी ऊँचे ओहदे पर होती। हमेशा फर्स्ट आयी है। कितनी अच्छी अंग्रेजी जानती है, बी.ए. में कितने नम्बर मिले थे। भगवान के घर देर है, अन्धेर नहीं। आखिरकार उसने अच्छा योग्य वर भेजा न!"

कल तक जो सुजाता सबकी आँखों में किरकिरी थी, आज वह आँखों की पुतली बन गयी।

सुजाता से अब घर का कोई भी काम नहीं लिया जाता है, उल्टा उसे आराम करने को कहा जाता है। कदाचित, छोटी बहन बिट्टू अगर उसे खाना परोसने या किसी काम में हाथ बँटाने बुलाती, तो उसकी माँ तत्काल कहतीं, "रहने दो, उसे मत तंग करो, मैं कर देती हूँ।"

-"अरे माँ, थोड़ा-बहुत काम करने से वह दुबली नहीं हो जाएगी, हाथ पर हाथ धरे बैठे रहने से आलसी ही हो जाएगी।"

-"चुप कर तेरी दीदी इतनी मेहनती है, बहुत काम कर चुकी है। अब दो-चार दिन आराम कर लेने दे। ससुराल में तो काम ही काम, फुर्सत कहाँ मिल पाएगी, देख न हमें! कितने सारे लोग शादी में आएंगे, रंग-रूप ठीक रखना है.... चन्द दिनों की मेहमान है अब वह।"

पिता और भाई भी सिवाय पानी पिलाने के कोई आदेश नहीं देते।

सुजाता को अपने घर पर अतिथि बने रहना बड़ा अजीब लगने लगा। इस अद्‌भुत अनूठे अनुभव को उसने सँजोए रखना चाहा और एक-एक दिन की घटना को, घर के सदस्यों की मीठी-मीठी बातों को, वह अपनी डॉयरी में दर्ज करने लगी।

सुजाता का आज का अनुभव उसके पिछले दो वर्षों के अनुभव के ठीक विपरीत है। सुबह उसकी आँख खुलती महरी के दस्तक देने पर दो-तीन आवाज के बाद अगर सुजाता जवाब नहीं देती, तो उधर से माँ की आवाज आती, "बुचिया, बुचिया!"

दरवाजा खोलकर भीतर आने की देर नहीं कि माँ का फरमान, "बुचिया! जल्दी से हाथ-मुँह धोकर पापा को चाय दे आ... बबलू और बिट्टू को नींद से जगा, उठ जायँ, तो चाय दे दे।"

सुजाता सबको चाय पहुँचाती फिर बाथरूम जाकर साफ-सुथरी होकर खुद अपनी चाय ले लेती। कभी-कभार उसकी चाय ठण्डी हो जाती और चूल्हे पर खाना पकने के कारण ठण्डी चाय दोबारा गर्म कर पाना सम्भव नहीं हो पाता या फिर उसके लिए चाय ही नहीं बचती, तो सुजाता नर्मी से विरोध जताती, "माँ मेरी चाय? मेरा भी ख्याल रखना चाहिए?"

माँ की त्योरियाँ चढ़ जातीं, "तू क्या मेहमान है, जो तेरे लिये इन्तजार करूँ? दस घण्टा बाथरूम में रहोगी, तो चाय ठण्डी हो ही जाएगी। अब जैसी है, वैसी पी ले। रोज-रोज फालतू गैस जलती है।" कभी कहतीं, "नहीं बची, तो नहीं बची, नशा बुरी चीज है।"

सुजाता चाय पीती या ना पीती, पिता की आवाज से चौंकती, "बुचिया! अभी तक अखबार नहीं लायी? देख, जल्दी से ले आ, वरना कोई उठा लेगा।"

सुजाता अखबार लेकर जाती, तो उसका भाई बबलू चिल्लाता, "ए बुचिया! स्पोर्ट्स वाला पेज इधर दे जा। अभी थोड़ी देर में ले जाना, एक बात रोज-रोज कहनी क्यों पड़ती है?"

इधर सब्जीवाला गुहार लगाता, "आलू, टमाटर, गोभी, बैंगन.... दीदी!"

माँ चीखती, "बुचिया! जा सब्जी ले ले सुन! देख ले डलिया में क्या है, क्या नहीं है, बिना देख-सुनकर ले लेती है, तो जरूरत से ज्यादा तरकारी बनानी पड़ती है, फालतू खर्चा होता है। टमाटर देखकर लेना, लाल-लाल और थोड़ा कड़ा हो। उस दिन सारा फेंकना पड़ा था। रोज-रोज तरकारी खरीदती है, फिर भी ताजा-बासी, अच्छा-बुरा नहीं पहचान पाती, पैसा बेकार जाता है! और सुन! मिर्चा अलग से माँग लेना। फोकट में देता है, फिर भी नहीं लेती।" माँ की इस तरह की बातें सुजाता एक कान से सुनती, दूसरे से निकाल देती है आदत पड़ चुकी थी।

-"माँ! ग्यारह रुपये पचास पैसे।"

-"ठीक से जोड़ लिया है न? मिर्चा का तो जोड़ा नहीं?"

उधर दूधवाले की सीटी बजने लगी। दूधवाला तूफान मेल है, जरा-सा सब्र नहीं कर सकता, सीटी पर सीटी बजाता। खीझकर माँ कहती, "बुचिया वहाँ खड़े-खड़े क्या कर रही है? सुनायी नहीं देता? क्या मैं दौड़ूँ? जा, जल्दी से दूध ले ले, बर्तन ठीक से धो लेना।"

-"पहले रुपये तो दीजिए, सब्जीवाला कब से खड़ा है।" सुजाता झुँझलाती।

-"दूधवाला एक घण्टा खड़ा रहेगा क्या? अभी चला जाएगा तो हाय-हाय करना पड़ेगा। तू दूध ले ले, मैं सब्जीवाले को दे देती हूँ.... साढ़े ग्यारह कैसे हुआ? तुझे वह जो दाम बता देता है, तू वही मान लेती है, मोल-भाव करना पड़ता है! पता नहीं किस राजकुमार के घर जायेगी, कैसे गृहस्थी संभालेगी!"

थोड़ी-सी फुरसत मिलती, तो सुजाता अखबार लेकर बैठती। अभी पन्ना भी नहीं पलट पाती कि बबलू का हुक्म होता, "बुचिया! मेरी कमीज प्रेस कर दे। कल तूने बनियान साफ नहीं की थी, आज कर देना।"

कमीज पर आयरन चलाती, तो माँ की आवाज सुनायी देती, "बुचिया! पापा की पैंट-शर्ट निकाल दे और

टिफिन तैयार कर बैग में रख देना।"

इसी तरह दिन-भर चरखी जैसी चक्कर काटती बुचिया। कहने को तो उसकी माँ की गृहस्थी माँ ही सँभालती, हिसाब-किताब भी वही रखती, लेकिन अनगिनत छोटे-बड़े काम, जिन पर शायद ही किसी का ध्यान जाता हो, बुचिया को करना पड़ता। सुबह से रात तक इतनी मर्तबा 'बुचिया बुचिया' सुनती कि सुनते-सुनते कान थक जाते, हाथ-पैर दुखने लगते। थककर चूर होकर बुचिया बिस्तर पर निढाल होती, तो एकदम शव-सी पड़ी रहती। कदाचित सपने में 'बुचिया' सुनकर एकबारगी नींद से उठ बैठती। किन्तु तब भी बेचारी को सुनना पड़ता, "बुचिया कुछ नहीं करती, जब देखो, तब रिकार्ड प्लेयर बजाकर गाना सुनती है या टी.वी. के सामने बैठी रहती है। सिलाई-बुनाई कर सकती है, घर का दो पैसा बच सकता है।"

बुचिया को ताने-उलाहने सुनने, घरवालों की रुखाई देखने और सुनने की आदत पड़ चुकी थी। सुजाता करे, तो क्या करे, कहे तो किससे कहे, कुछ नहीं समझ पाती। वह तो बस भाग्य को कोसती और भगवान के सामने गिड़गिड़ाती, "हे भगवान! मुझे लड़की का जन्म क्यों दिया? लड़की बनाया, तो उस घर में क्यों भेजा, जहाँ लड़की के हाथ पीले करने के लिए ढेर रुपए खर्च करने पड़ते हैं? उस घर में क्यों भेजा, जहाँ हिटलर जैसा बाप है, जिसके आगे किसी की नहीं चलती? उस घर में क्यों भेजा, जहाँ बेटियों को थोड़ा-बहुत पढ़ने तो दिया जाता है, लेकिन आगे बढ़ने नहीं दिया जाता है।"

सुजाता ने अपनी भावनाओं को, मन की पीड़ाओं को डॉयरी में दर्ज कर रखा है। सुजाता ने लिखा कि जब वह स्टूडेण्ट थी, उसकी हर प्रगति व प्रशस्ति पर उसके माता-पिता बल-बल खाते, उसकी बातों को गम्भीरता से लेते, उसे बढ़ावा देते, मगर अब जब पढ़ाई-लिखाई छोड़, दो वर्ष से बिन ब्याही बैठी हुई थी, उसकी स्थिति अपने ही घर में दासी की हो गयी थी, जिसे तन ढँकने के कपड़े और दो टाइम खाना खाने के एवज में कोल्हू जैसा खटना पड़ता। अब वह सुजाता नहीं, बेजुबान आज्ञाकारी 'बुचिया' बन चुकी थी। सुजाता ने लिखा था कि जब वह एम.ए. में थी और आगे बढ़ने के लिए भरपूर मेहनत कर रही थी, तभी अचानक उसके पिता ने उसे कॉलेज जाने से मना कर दिया था।

उसके पिता के कान भरने वाला था उसका अपना भाई बबलू। बबलू ने कई बार सुजाता से कहा था कि वह अपने क्लास के लड़कों से बातें न किया करे, मगर सुजाता ने हर बार जवाब में कहा था, "इसमें कौन-सी बुराई है भइया? हम साथ-साथ पढ़ते हैं, दिन-भर क्लास-रूम में रहते हैं, बातें यूँ ही हो जाती हैं, मैं अकेली थोड़े ना हूँ। सभी लड़कियाँ लड़कों से बातें किया करती हैं।" मगर जिस दिन बबलू घर पर बेतुकी बातें करने लगा था और राजीव नाम के एक लड़के के साथ खामख्वाह उसका नाम जोड़ा था, उस दिन सुजाता ने अपना आपा खो दिया था और कहा था, "भैइया, तुमने तो यूनिवर्सिटी का मुँह नहीं देखा है को-एजूकेशन क्या होती है, तुम क्या जानोगे?" उस दिन बबलू ने धमकी देकर कहा था, "खूब समझता हूँ और तुम्हें अच्छी तरह से समझाऊँगा बहुत उड़ रही है, तेरे पर काटने पड़ेंगे।"

बबलू ने सुजाता के जीवन में जो जहर घोला था, उसकी ख्वाहिश को जिस तरह लिए सुजाता उसे घृणा करती है। किन्तु यह अजीब-सी विडम्बना है कि घृणा के बावजूद सुजाता को बबलू के हाथ में राखी बाँधनी पड़ती है। राखी बँधवाकर जब बबलू बहन को आशीर्वाद देता, तो सुजाता मन ही मन कहती, "भइया, तुम जुग-जुग जीओ, सुखी रहो। पर तुमने मेरे साथ जो कुछ किया है, उसके लिए मैं तुम्हें कभी माफ नहीं करूँगी, कभी नहीं। अगले जन्म में

तुम जैसा मनहूस भाई भगवान मुझे ना दे, यही कामना हर रक्षाबन्धन के दिन करूँगी।''

शादी तय हो जाने से सुजाता खुश है। खुश है कि उसे इस दमघोंटू वातावरण से मुक्ति मिलेगी, खुश है कि उसे उसके भाई की सूरत नहीं देखनी पड़ेगी, खुश है कि अब उसे 'बुचिया, ए बुचिया' करके कोई नाक में दम नहीं करेगा। खुश है कि मोहल्ले की चाची जी, ताई जी, नानी जी, बुआ जी उसे कनखियों से नहीं देखेंगी और अब वे लोग उसकी मौजूदगी में उसकी माँ से शादी की इंक्वायरी नहीं करेंगी और सुजाता खुश है कि उसके रिश्तेदार अब खतों के अन्त में नहीं लिखेंगे, सुजाता की शादी का क्या हुआ?

सुजाता नवीन सपनों की उधेड़बुन में लग गयी। उसके होने वाले जीवनसाथी ने उसके सर्टिफिकेट व मार्कशीट देखकर उसकी प्रतिभा की तारीफ तो की ही थी, साथ ही साथ अचरज भी व्यक्त किया था कि उसने अपने कैरियर को मँझधार में डूबने क्यों दिया। मिहिर ने उससे कहा था कि उसे पढ़-लिखकर नौकरी करनी चाहिए। उत्तर में सुजाता ने कहा था कि उसके खानदान में बेटियों को अधिक पढ़ाने की प्रथा नहीं है, सिर्फ अच्छी व कुशल गृहिणी बनने की तालीम दी जाती है। घरवाले नौकरी चाकरी के विरोधी हैं। मिहिर ने उससे कहा था कि अगर वह लिख-पढ़कर कुछ बनना चाहेगी, तो वह पूरा साथ देगा, क्योंकि उसकी इच्छा है कि उसकी बीबी कमाऊ हो, ताकि दोनों की आमदनी से जीवन का स्तर बेहतर हो।

सुजाता के मन की अतृप्त इच्छा अचानक जाग उठी। अति उत्साह के साथ उसने सारे सर्टिफिकेट, मार्कशीट, प्रशस्ति-पत्रों तथा तमाम नोट्स व किताबों को बटोरकर इकट्ठा किया। धूल की परतों को हटाकर सारी पुस्तकों पर कवर चढ़ाया और अलमारी में सजा दीं। अब वह सुबह अपनी मर्जी से माँ के साथ काम में थोड़ा-बहुत हाथ बँटाती, फिर किताब खोलकर बैठ जाती। उसे पढ़ते देख उसकी माँ उत्साहित हो उठी, उन्होंने बेटी की पीठ थपथपायी और ब्याह के बाद पढ़ाई चालू करने की बात कही। सुजाता ने माँ के आग्रह को देख पढ़ाई शुरू करने की इच्छा जाहिर की। थोड़े दिनों की बाद वह यूनिवर्सिटी जाने लगी। वह मन लगाकर पठन-पाठन करने लगी और साथ-साथ नौकरी पाने के लिए कम्पीटिशन की तैयारी करने लगी।

मगर जब चार-पाँच महीने बाद सुजाता का इम्तहान निकट था, सुजाता ने अचानक गौर किया कि उसके अध्ययन में किसी को कोई दिलचस्पी नहीं है, बल्कि उसके पिता और भाई दोनों ही उसे यूनिवर्सिटी जाने से मना करने लगे। उसकी माँ ने जुबान पर ताला लगा दिया था। उनके चेहरे पर ना पहले जैसी खुशी थी और ना ही गम था। वह ज्यादातर गुमसुम रहतीं, चुपचाप अपने काम में लीन रहती और मन ही मन बुदबुदाती।

सुजाता ने गौर किया कि उसके माता-पिता जब कभी आपस में बात करते, उस दौरान अगर वह दाखिल हो जाती, तो तुरन्त बातचीत का विषय बदल जाता या फिर सन्नाटा पसर जाता। सुजाता को लगा कि शायद घरवाले उसकी शादी की बात उसके सामने नहीं करना चाहते।

फिर धीरे-धीरे उसके पिता और भाई हुक्म चलाने लगे। सुबह होते ही शुरू हो जाता 'बुचिया' 'बुचिया'। सुजाता वजह ढूँढ़ती। यूनिवर्सिटी में शीतकालीन अवकाश था। सुजाता दिन-रात पढ़ना चाहती, किन्तु बार-बार किताब बन्द कर हुक्म का पालन करना पड़ता। एक दिन परेशान होकर वह झुँझला उठी, ''आप लोगों ने मेरा जीना दूभर कर रखा है। सिर पर इम्तहान सवार है, जब तब डिस्टर्ब करते हैं।''

-''किसके लिए पढ़ रही है तू? मैं तो कहती हूँ यह पढ़ाई-वढ़ाई बन्द कर घर बैठ। ज्यादा लिख-पढ़ लेगी,

तो तेरी शादी नहीं हो पायेगी।" माँ ने हताशा व्यक्त की।

-"क्या?" सुजाता स्तब्ध, हतप्रभ। किसी ने कुछ नहीं कहा।

सुजाता ने जब काफी कुरेदा, तब उसकी माँ कमरे के भीतर जाकर लिफाफा ले आयी और सुजाता को थमा दिया।

लिफाफा खोलते ही सुजाता सातवें आसमान से गिरी। उसकी तस्वीर और साथ में था एक पत्र। पत्र में लिखा था-

"अत्यन्त दुःखी होकर मैं आपको आपकी बेटी की तस्वीर लौटा रहा हूँ। आपका घर-द्वार, आपके घर के लोग हमें बहुत अच्छे लगे थे। सुजाता बेटी की जितनी प्रशंसा करूँ, नाकाफी होगी। किन्तु क्या बताऊँ, मेरे बेटे ने अभी पिछले हफ्ते फोन पर बताया कि वह वर्किंग गर्ल से शादी करना चाहता है। उसने एक लड़की की सूचना भी दी है। ऐसी स्थिति में मैं नहीं समझता कि बेटे को जोर-जबर्दस्ती राजी करवाना उचित होगा। आपकी बेटी सुजाता के लिए मंगल कामनाएँ करता हूँ।"

पत्र पढ़ते-पढ़ते सुजाता रुआँसी हो गयी। सुजाता ने देखा उसकी माँ पलंग पर बैठकर सुबक रही हैं, आँसुओं को रोकने की कोशिश कर रही हैं। अपना मनोबल मजबूत कर सुजाता ने कहा, "माँ! ऊपरवाला जो कुछ करता है, भलाई के लिए ही करता है। कहावत है शादियाँ स्वर्ग में तय होती हैं.... आप लोग बेवजह दिल छोटा न करें। मैं अपनी पढ़ाई जारी रखूँगी, इम्तहान दूँगी। मैं नौकरी की तलाश करूँगी, नौकरी कर लूँगी, तो किसी के भरोसे नहीं रहना पड़ेगा। न किसी के आगे झुकना पड़ेगा, न दहेज का लफड़ा और न लोगों की बेतुकी बातें।" बगलवाले कमरे से पिता ने कर्कश स्वर में कहा, "बुचिया! ज्यादा बोलने लगी है। हम तेरे लिये फिर से लड़का ढूँढ़ेंगे। कल से पढ़ाई-लिखाई बन्द। यह मेरा आदेश है।"

सुजाता पिता के सम्मुख जाकर दृढ़ता से बोली, "पापा! पिछली मर्तबा जब मैं घर बैठ गयी थी, उस समय सर्टिफिकेट के मुताबिक मैं अट्ठारह की नहीं थी। अब मैं अपना निर्णय लेने में सक्षम हूँ.... मैं पीछे लौटने वाली नहीं हूँ। आप अगर मेरा खर्च नहीं उठाएँगे, तो ना सही। मैं स्वयं अपना रास्ता ढूँढ़ लूँगी। यह मेरा फैसला है।" सुजाता के उत्तर से माता-पिता दोनों स्तब्ध रह गये।

सुजाता की शादी क्यों कैंसिल हो गयी, इसका जवाब देते-देते सुजाता के माता-पिता तंग आ गये। पूरे मोहल्ले में, रिश्तेदारों में तरह-तरह की बातें होने लगीं। हर रोज कभी भाई या कभी बहन किसी से कुछ सुनकर घर आकर कहते और तत्काल घर का वातावरण गर्म हो जाता। लोगों को जवाब देने के भय से सुजाता की माँ ने घर से बाहर निकलना बन्द कर दिया। जाने-अनजाने उनका आचरण सुजाता के प्रति खराब होने लगा। छोटी-छोटी बातों पर वे रूठ जातीं और सुजाता पर गुस्सा उतारतीं बहुत दिनों तक सुजाता ने यह सोचकर माँ से कुछ नहीं कहा कि माँ की निराशा और बेटी की चिन्ता उनके आचरण में झलकती है, लेकिन एक दिन जब सुजाता दूध गैस पर चढ़ाकर पढ़ने लगी थी और दूध गाढ़ा होते-होते जलकर राख हो गया था और सुजाता दौड़कर किचन में खड़े-खड़े 'च्च-च्च' करके अफसोस करने लगी थी, उस समय उसकी माँ पीछे से आकर बरस पड़ी थी, "पता नहीं तेरा मन कहाँ पड़ा रहता है! तेरे कारण कितना नुकसान हुआ है!" तब सुजाता ने अपना धीरज खो दिया था, "माँ! मेरी तस्वीर क्या लौट आयी, आप सबों ने मेरा जीना दूभर कर दिया है. ... अच्छा होता वे लोग तस्वीर ना लौटाकर थोड़ी-सी मोहलत माँग लिए होते, कम से कम और कुछ दिनों तक मैं सुजाता तो बनी रहती। माँ! मेरी तस्वीर लौट आयी है, तो इसमें मेरा क्या कसूर? अब से अपनी गृहस्थी आप खुद सँभालिए, सब लोग अपना-अपना काम खुद किया करें।

सभी सक्षम हैं.... अब मैं और बुचिया नहीं बनूँगी।"

माहौल गर्म हो उठा। माँ का चेहरा तमतमा उठा, होंठ फड़फड़ाने लगे, कटाक्ष दृष्टि से बेटी को देखने लगीं। फनफनाती हुई सुजाता कमरे से बाहर निकलने लगी कि उसके पिता हाथ में एक पैकेट मिठाई लेकर प्रसन्नचित्त मुद्रा में कमरे के भीतर दाखिल हुए और उल्लासित होकर बोले, "अभी-अभी इण्टरनेट में रिजल्ट देखकर आ रहा हूँ, सुजाता को बैंक की नौकरी मिल गयी है। वेल डन माई गर्ल, खूब तरक्की करो! मे गॉड ब्लेस यू।"

खुशी के मारे सुजाता उछल पड़ी। उसने माता-पिता का चरण स्पर्श किया। माँ ने बेटी को गले से लगाया। अपार खुशी का इजहार करते हुए पिता बोले, "मुझे नाज है बेटी तुम पर, तुमने चमत्कार कर दिखाया। तुमने मेरी सोच बदल डाली। मुझे अब तुम्हारी शादी के लिए चप्पलें नहीं घिसनी पड़ेंगी, रिश्ते खुद चलकर आएँगे।" कुछ शर्मिन्दगी से सुजाता बोली, "पापा बस! मैंने इतना कमाल नहीं किया है। आजकल तो यह आम बात है, लड़कियाँ क्या कुछ नहीं कर रही हैं।"

अगले दिन सुबह-सुबह फोन की घण्टी बजी। सुजाता की माँ ने रिसीवर उठाकर कुछ सुना, कुछ कहा, फिर सुजाता की ओर रिसीवर बढ़ाकर कहा, "लो बेटी, एक और खुशखबरी...."

-"बधाई हो! मैं बहुत खुश हूँ.... बधाई!!"

-"हैलो! हैलो!.... सुजाता खुश हूँ.... बधाई!!"

-"हैलो! हैलो!.... सुजाता न?"

-"जी! मैं सुजाता।"

-"मेरी बधाई कबूल नहीं करोगी?.... मैं मिहिर।"

-"सॉरी रांग नम्बर!" सुजाता ने गुस्से से रिसीवर पटक दिया। सुजाता के माता-पिता बेटी की आँखों में एक चमकती धार को लौटता देख रहे थे।

एल-6, पंचपुष्प अपार्टमेण्ट,
417, अशोक नगर, प्रयागराज-211001
मो0 9415324238

रामकृष्ण परमहंस और विवेकानन्द, ये दोनों एक ही जीवन के दो अंश, एक ही सत्य के दो पक्ष हैं रामकृष्ण अनुभूति थे, विवेकानन्द उसकी व्याख्या बनकर आये। रामकृष्ण दर्शन थे, विवेकानन्द ने उनके क्रिया-पक्ष का आख्यान किया। स्वामी विवेकानन्द ने रामकृष्ण को हिन्दू-धर्म की गंगा कहा है जो वैयक्तिक समाधि के कमंडलु में बन्द थी। विवेकानन्द इस गंगा के भगीरथ हुए और उन्होंने रामकृष्ण रूपी देवसरिता को कमंडलु से निकाल कर सारे विश्व में फैला दिया।

-रामधारी सिंह 'दिनकर'

अपराध बोध

➲ पुष्पेश कुमार पुष्प

कॉलेज के गार्डन में बैठी मंजरी की निगाहें किसी को तलाश रही थीं। वह कॉलेज में इसलिए आयी थी कि वह अपनी लापता बहन की खोज कर सके। हेली भी इसी कॉलेज में पढ़ती थी। वह पढ़ने में काफी तेज थी। सब कुछ ठीक-ठाक चल रहा था कि एक दिन अचानक उसके कॉलेज से फोन आया था। उसके परिवार वालों को बताया गया कि हेली कई दिनों से कॉलेज नहीं आ रही है। उसके हॉस्टल में भी पता लगाया गया, लेकिन वह वहाँ भी नहीं थी। उसके दोस्तों से पूछताछ की गयी, किन्तु कोई कुछ बताने को तैयार नहीं है। पुलिस को भी इस बात की जानकारी दे दी गयी है। पुलिस भी उसकी खोजबीन कर रही है।

यह सुनते ही उसके माँ-बाप की आँखों के आगे अंधेरा छा गया। ऐसे वक्त में मंजरी ही आगे आयी थी और अपने माँ-बाप की हिम्मत टूटने नहीं दी। माँ-बाप से इजाजत लेकर ही अपनी बहन की खोज में यहाँ आ गयी।

हेली ने बताया था कि रमेश उसका सबसे अच्छा दोस्त है। वह उसकी बहुत मदद करता है। मंजरी उससे मिलने को आतुर हो रही थी। वह रमेश से जानना चाहती थी कि उसकी बहन आखिर कहाँ गायब हो गयी? रमेश जरूर इस रहस्य पर से पर्दा उठा सकता है।

काफी पूछताछ के बाद किसी ने बताया कि रमेश काफी दिनों से कॉलेज नहीं आ रहा है। वह आजकल काफी उदास रहता है। हाँ, उसका मोबाइल नम्बर जरूर दे सकता हूँ। आप उसे यहाँ बुला लीजिए।"

मंजरी ने फौरन उसके नम्बर को लगाया और उसे कॉलेज के गार्डन में आने को कहा।

रमेश ने फोन पर ही उसका परिचय जानना चाहा।

मंजरी ने बताया कि वह हेली की बहन है और उसकी खोज में आयी है। तब वह कॉलेज में आने को तैयार हुआ।

कुछ समय बाद ही मंजरी को एक खूबसूरत नौजवान गार्डन की ओर आते दिखायी दिया। देखने में एकदम सीधा-सादा लग रहा है। मंजरी समझ गयी कि यही रमेश है। उसकी खोज में रमेश जरूर मदद करेगा।

मंजरी खड़ी हो गयी। रमेश उसके करीब आ गया। उसे देखकर रमेश हक्का-बक्का रह गया। मंजरी का चेहरा भी हेली से मिलता-जुलता लग रहा था। उसके उदास चेहरे पर मुस्कान थिरक गयी। उसे लगा जैसे उसके सामने हेली ही खड़ी हो। वह एकटक मंजरी को निहारने लगा।

तभी मंजरी ने उसका ध्यान भंग करते हुए बोली-"आप ही मेरी बहन के दोस्त रमेश हैं।"

"हाँ, मैं ही रमेश हूँ।" वह उसे गौर से देखते हुए

बोला।

"आप तो जानते ही हैं कि मेरी बहन का कुछ अता-पता नहीं चल रहा है। आखिर वो कॉलेज से कहाँ गायब हो गयी? आप जरूर मेरी बहन के गायब होने के पीछे का रहस्य जानते होंगे? आखिर मेरी बहन कहाँ चली गयी? अब आप ही उसकी खोज में मेरी मदद कर सकते हैं।" मंजरी उसे अपलक नेत्रों से देखते हुए बोली।

"तुम्हारा नाम क्या है? तुम्हारा चेहरा हेली से काफी मिलता-जुलता है। हेली की खोज में मैं तुम्हारी मदद अवश्य करूँगा।" वह उदास स्वर में बोला।

"मेरा नाम मंजरी है और मैं अपनी बहन की खोज में आयी हूँ। अब आप ही इस रहस्य पर से पर्दा उठा सकते हैं।" मंजरी उत्साहित स्वर में बोली।

"हेली मेरी बहुत अच्छी दोस्त थी। हमारी दोस्ती कब प्यार में बदल गयी पता ही नहीं चला। वह रोज शाम को मुझसे मिलती थी। हम दोनों का प्यार इस कॉलेज में पढ़ने वालों के बीच मिसाल बन गया था। हम लोग मेडिकल की पढ़ाई के अन्तिम वर्ष के छात्र थे। हमारे प्यार को देखकर कॉलेज के लड़के-लड़कियाँ जलते थे। हमें साथ आते-जाते देख वे फब्तियाँ कसने से भी नहीं चूकते थे। इस बीच हमारी दोस्ती मनोहर से हो गयी। मनोहर अमीर बाप का बेटा था। वह हमारे प्यार से जलता नहीं था, बल्कि हम दोनों का मनोबल बढ़ाता था। परीक्षा के बाद कॉलेज के सारे छात्रों ने राजगीर घूमने का मन बनाया। कॉलेज से राजगीर जाने की अनुमति मिल गयी।

राजगीर जाते ही मेरी तबियत खराब हो गयी। फिर भी मैं हेली का मूड खराब नहीं करना चाहता था, इसलिए न चाहते हुए भी राजगीर का सौन्दर्य देखने निकल पड़ा। हेली मुझसे पहाड़ पर चढ़ने की जिद करने लगी, लेकिन मेरी हिम्मत पहाड़ पर चढ़ने की नहीं हो रही थी। मैंने हेली से कहा-"मैं बहुत थक गया हूँ। पहाड़ पर नहीं चढ़ पाऊँगा। तुम चली जाओ।"

"मैं तुम्हारे बिना नहीं जाऊँगी।" हेली मुझसे पहाड़ पर चढ़ने की जिद करने लगी।

इसी बीच वहाँ मनोहर आ गया और बोला-"क्या हुआ? तुम लोग किस बात पर बहस कर रहे हो।"

"हेली पहाड़ पर चढ़ने की जिद कर रही है। मेरी तबियत ठीक नहीं लग रही है। मुझे थकान का एहसास हो रहा है। मैं हेली को अपने दोस्तों के साथ पहाड़ पर जाने को कह रहा हूँ, लेकिन यह मान नहीं रही है।" मैंने मनोहर से कहा।

"इसमें इतना बहस करने की क्या बात है? तुम्हारी तबियत ठीक नहीं है, तो तुम आराम करो। मैं हूँ न। तुम्हें पहाड़ पर घुमाने ले जाऊँगा। क्यों रमेश?" मनोहर मेरी ओर देखते हुए बोला।

"मनोहर ठीक कह रहा है। मेरे कारण तुम अपना मूड क्यों खराब कर रही हो? मनोहर है न! इसके साथ पहाड़ पर जाकर घूम लो। वहाँ तुम्हारे और दोस्त मिल ही जाएंगे। तुम मेरी चिन्ता मत करो। मनोहर के साथ घूम आओ।"

न चाहते भी मनोहर के साथ हेली को पहाड़ पर घूमने के लिए भेज दिया।

शाम को सभी पहाड़ पर से उतर आये, किन्तु मनोहर का अता-पता नहीं था। यह जानकर मेरा मन घबराने लगा। प्रोफेसर के पूछने पर छात्रों ने बताया कि वे दोनों घूमते घने जंगल की ओर निकल गये। फिर वे दोनों नजर नहीं आये। हम लोगों ने सोचा कि कुछ दूर जंगल का भ्रमण करने के बाद लौट गये होंगे।"

यह सुनकर मेरा हृदय किसी अनजाने भय से काँप उठा। हम लोग उन दोनों के आने का इन्तजार करने लगे। तभी शाम के धुंधलके प्रकाश में हेली पहाड़ से उतरती

दिखाई दी। मैं फौरन उसकी ओर भागा। उसकी हालत देखकर मैं दंग रह गया। उतरा हुआ चेहरा, आँखें लाल, सूजी हुई मानो बहुत रोयी हो।

मैं उससे कुछ पूछता कि मनोहर भी वहाँ आ गया और बोला-"हेली घने जंगल में घूम रही थी कि कंटीले झाड़ी से उलझकर गिर गयी। वो तो मैं समय पर आ गया अन्यथा न जाने क्या अनर्थ हो जाता?"

हेली अपनी आँखें नीची किये चुपचाप खड़ी थी।

मैंने हेली से कहा-"चलो जल्दी! सभी जाने को तैयार हैं। तुम्हारे आने का इन्तजार कर रहे थे। हॉस्टल चलकर खरोंच पर दवा लगा लेना।"

हेली बुझे स्वर में बोली-"तुम्हारी तबियत कैसी है?"

"ठीक हूँ।" मैं बोला।

राजगीर से आने के बाद हेली के स्वभाव में काफी परिवर्तन आ गया। उसके बदले स्वभाव को देखकर मुझे इस बात का एहसास हो गया कि कहीं न कहीं कुछ गड़बड़ है, क्योंकि हर किसी को हँसाने वाली हेली इतनी गुमसुम क्यों हो गयी?

हेली मुझसे दूरी बनाने लगी और मनोहर से उसकी नजदीकियाँ बढ़ती ही जा रही थीं। जब भी मैं इस बारे में बात करना चाहता, तो बात को टाल देती।

एक दिन मैंने उससे कहा-"आज तुम्हें मेरे प्रश्नों का उत्तर देना ही होगा।"

"आखिर तुम किस प्रश्न का उत्तर चाहते हो?" हेली ने पूछा।

"यही जो मैं देख रहा हूँ। क्या तुम सचमुच मनोहर को चाहती हो या कोई मजबूरी है। यदि तुम कहोगी तो मैं स्वयं तुम्हारे रास्ते से हट जाऊँगा। लेकिन हेली बिना कोई जवाब दिये चली गयी। उस दिन के बाद हेली मुझसे नहीं मिली।" रमेश नितान्त उदास स्वर में बोला।

मंजरी सारी कहानी समझ गयी। वह समझ गयी कि हेली के गायब होने के पीछे कोई न कोई राज है और इसके पीछे जरूर मनोहर का ही हाथ होगा।

"मंजरी तुम किस सोच में पड़ गयी?" रमेश उसका ध्यान भंग करते हुए बोला।

"मैं यह सोच रही थी कि इसके पीछे कौन हो सकता है? तुम्हें नहीं लगता कि इस सबके पीछे मनोहर का हाथ है।" मंजरी रमेश से बोली।

"तुम्हारा कहना बिल्कुल सही है। मुझे भी लगता है कि इस सबके पीछे मनोहर का हाथ है, लेकिन बिना वास्तविकता जाने किसी पर आरोप नहीं लगाया जा सकता।" रमेश बोला।

"इस मनोहर से सच उगलवाना ही होगा। मैं उससे सच उगलवाकर ही रहूँगी।" मंजरी बोली।

"इसके लिए हम दोनों को मनोहर की गतिविधियों पर नजर रखनी होगी।" रमेश बोला।

रमेश मंजरी को मनोहर से मिलवाने ले गया। मनोहर मंजरी को देखकर हक्का-बक्का रह गया और बोला-"तुम बिल्कुल हेली जैसी दिखती हो। न जाने क्यों हेली तुम लोगों से नाराज होकर कहाँ चली गयी? उसके बगैर मेरा जीवन कितना सूना हो गया। वह मुझसे कितना प्यार करती थी।" और उसकी आँखों से आँसू बहने लगे।

"तुम हेली की खोज करने में मेरी मदद करोगे न।" मंजरी उसकी ओर देखते हुए बोली।

"हाँ, हाँ क्यों नहीं? हेली की खोज में तुम्हारी मदद जरूर करूँगा।" मनोहर बोला।

मनोजर रोज हेली की खोज करने के बहाने मंजरी से मिलने लगा। काफी दिन हो गये, लेकिन हेली का कुछ पता नहीं चला।

एक दिन मनोहर उसे घुमाने के लिए शहर से दूर ले गया। मंजरी ने रमेश को इस बात की जानकारी दे दी

थी। रमेश भी मनोहर के पीछे लग गया।

दोनों घूमते-घूमते एक निर्जन स्थान की ओर बढ़ गये। मनोहर सुनसान इलाका देखकर मंजरी के साथ जबरदस्ती करने लगा। मंजरी उससे अपनी इज्जत बचाने की गुहार लगाने लगी, लेकिन वह तो हवस का पुजारी बन गया था। वह मंजरी को अपनी बाँहों में समेटने ही वाला था कि मंजरी उसे जोर का धक्का देकर भागने लगी। मनोहर भी कहाँ पीछे रहने वाला था? वह उसके पीछे भागा और आखिर मंजरी को पकड़ ही लिया। बोला-"बड़ी आयी है अपनी बहन की खोज करने। तुम भी बिल्कुल हेली जैसी दिखती हो। तुम्हें भी अपनी हवस का शिकार बनाऊँगा, जैसे तुम्हारी बहन को बनाया था। वह तुम्हें नहीं मिलने वाली है। अब अपनी सोचो! तुम्हारी इज्जत को तार-तार होने से कौन बचायेगा?"

"कमीना! नीच। तूने ही मेरी बहन को गायब किया है। बता तूने मेरी बहन को कहाँ गायब कर दिया?" मंजरी काँपते स्वर में बोली।

तेरे साथ यह राज हमेशा-हमेशा के लिए दफन हो जाएगा।" वह मंजरी को अपनी बाँहों में भरते हुए बोला।

तभी वहाँ रमेश आ गया और उसे जोर से धक्का देते हुए बोला-"तू इतना नीच इंसान कैसे बन गया? दोस्त के नाम पर गद्दार कैसे हो गया? तेरा जमीर कैसे मर गया? बता तूने हेली के साथ क्या किया?"

"तेरे फालतू सवालों का मेरे पास कोई जवाब नहीं है। तू बीच में न आ, वरना अच्छा न होगा।" मनोहर ने मंजरी को पकड़ने की कोशिश करते हुए कहा।

रमेश ने उसके गाल पर जोर का तमाचा मारा। मनोहर जमीन पर गिर गया और अपने सिर को पकड़कर बैठ गया।

रमेश उसके करीब आया और बोला-"तू इतना निष्ठुर कैसे हो गया? तुम्हारे भीतर का इंसान कैसे मर गया? तू कानून की नजरों से जरूर बच जायेगा, लेकिन तेरी अन्तरात्मा तुझे न चैन से जीने देगी और न मरने। तू अपना गुनाह कबूल कर ले। बता आखिर तूने हेली के साथ क्या किया?"

मनोहर अपलक नेत्रों से उन दोनों को देखते हुए बोला-"हाँ, हाँ मैं ही हेली का हत्यारा हूँ। तुम ठीक कहते हो। मैं पहले ही हेली की हत्या के पाप के बोझ से दबा जा रहा था और अब मंजरी के साथ भी वही करने जा रहा था। मैं तुम दोनों को सब सच-सच बताऊँगा।"

"हेली तुमसे प्यार करती थी। मैं ने भी उसे चाहता था, लेकिन उसने मेरे प्यार को ठुकरा दिया। मैंने भी उसे अपना बनाने का निश्चय कर लिया था। उस दिन तुम्हारे कहने पर हेली मेरा साथ पहाड़ पर गयी और हम दोनों घूमते-घूमते दूर निकल गये। हेली ने मेरा हाथ पकड़ कहा कि अब बहुत घूम लिया। इस घने जंगल में ज्यादा देर रहना ठीक बात नहीं है। जंगली जानवर हम लोगों पर हमला भी कर सकते हैं। चलो वापस रमेश के पास चलते हैं उसके कोमल हाथों का स्पर्श मेरे शरीर को रोमांचित कर रहा था। उसकी खूबसूरती मुझे मदहोश कर रही थी। हेली की मजबूरी का फायदा उठाने का इससे अच्छा मौका नहीं मिल सकता था और मैं अपना संयम खो बैठा। बीच जंगल में हेली को अपनी बाँहों में भर लिया। वह मेरे आगे बहुत रोयी-गिड़गिड़ायी, लेकिन उस समय उसकी खूबसूरती मुझे बेचैन कर रही थी और उसे अपनी हवस का शिकार बना लिया। उसी दिन से हेली को मजबूरन मेरी हर बात माननी पड़ती थी। हेली मेरे बच्चे की माँ बनने वाली थी। वह मुझ पर शादी का दबाव बनाने लगी थी, लेकिन मैं अभी शादी नहीं करना चाहता था। और रोज-रोज के इस झगड़े से मुक्ति पाने का मैंने उपाय ढूँढ़ लिया।

एक दिन उसकी शादी करने की बात पर राजी हो

गया और पटना चलकर कोर्ट में शादी करने की बात कही। वह पटना चलने को तैयार हो गयी। पटना पहुँचकर हम दोनों रेल पटरी के किनारे-किनारे पुल पर चढ़ने जा रहे थे। तभी दूसरी ओर से ट्रेन आ रही थी और मैंने मौका देखकर हेली को जोर से धक्का दिया। वह ट्रेन के चपेट में आ गयी। उसके शरीर के चिथड़े उड़ गये। मैंने गुनाह किया है मुझे सजा मिलनी ही चाहिए। मैं तो तुम दोनों से माफी माँगने लायक भी नहीं हूँ। तुम दोनों ने आज मेरी आँखें खोल दी, अन्यथा मैं अपराध के दलदल में धँसता ही चला जाता।"

"मैं इस नीच को नहीं छोड़ूँगी। इसने मेरी बहन के जज्बातों से खेला है। मैं इसका खून पी जाऊँगी।" और मंजरी ने पास पड़े एक पत्थर को उठा लिया।

"तुम यह क्या करने जा रही हो, मंजरी? इसके हाथ तो खून से रंगे हैं, फिर तुम अपना हाथ खून से क्यों रंगना चाहती हो? इसे कानून सजा देगा। पुलिस आती ही होगी। मैंने पुलिस को फोन कर दिया था।" रमेश ने मंजरी के हाथ से पत्थर छीन कर दूर फेंक दिया।

मंजरी की आँखों से आँसुओं की धारा बह रही थी। रमेश उसके आँसुओं को पोंछते हुए बोला-"मंजरी! जो होना था, सो हो गया। अब आँसू बहाने से क्या फायदा? अपराधी ने अपना अपराध कबूल कर लिया है।"

"तुम ठीक कहते हो। इसे मारकर मैं अपना हाथ क्यों गंदा करूँ? कानून ही इसके किये की सजा देगा।" और मंजरी रमेश के सीने से लिपट गयी।

पुलिस आ चुकी थी। मनोहर ने पुलिस के सामने अपना अपराध स्वीकार कर लिया। पुलिस मनोहर को हथकड़ी लगाकर जेल की सलाखों के पीछे ले जा रही थी, तो रमेश मंजरी के साथ अपनी नई जिन्दगी की शुरुआत करने जा रहा था।

विनीता भवन, निकट-बैंक ऑफ इण्डिया,
काजीचक, सवेरा सिनेमा चौक,
बाढ़, बिहार-803213
मो.- 09135014901

राणाजी महे तो गोविंद रा गुण गास्यां।
चरणाव्रत रो नेम म्हारे नित उठ दरसण जास्यां।
हरि मन्दिर में निरत कारास्याँ घुंघरिया धमकास्याँ।
स्याम नाम रा जाज चलास्याँ भोसागर तर जास्याँ।
यो सँसार बीड़ रो काँटो, ज्याँ संगतनहीं जास्याँ।
मीराँ रा प्रभु गिरधर नागर, निरख परख गुण गास्याँ।।

-मीराँबाई

कन्धे पर गिरगिट

➲ राजनारायण बोहरे

उनके नाम से सब घर वालों के मन में 'गजनी आया' 'गजनी आया' की भय पैदा करती जिंगल बजने लगती है। वे जब भी आते हैं, असल में ऐसा कुछ कर जाते हैं कि घर वालों के मन में उनका आतंक और अधिक बढ़ जाता है।

'वे फिर आ गये हैं।' आज हर जगह यही सूचना मिल रही है। चारों घरों में यही चर्चा है। भीतर पहुँचते ही घर का कोई सदस्य फुसफुसाते हुए यह सूचना देता है और चुप हो जाता है। सूचना देने वाले के चेहरे पर दहशत के भाव झाँकते हैं और उसकी आँखें फिर किसी आशंका से शून्य में अटक जाती है।

यह तो मुझे भी लग रहा था कि वे जल्दी ही आन टपकेंगे, क्योंकि नीम वाले डेढ़ बीघा खेत का मुकदमा हम जीत गये हैं और चूँकि यह जमीन पटवारी की बही में अब भी शामिल-शरीक मालिकान के रूप में दर्ज थी, अलबत्ता मालिकान में चारों दादाजी के नाम लिखे हैं, सो उसमें से उनका हिस्सा-पटा होना शेष है। उरचन-खुरचन कुछ तो हाथ लगेगी, लूट का कूंडा ही भला। खबर पाकर वे जरूर आयेंगे।

कहने को मेरे छोटे दादाजी हैं, लेकिन किसी के मन में उनके प्रति रंचमात्र भी श्रद्धा नहीं है। उन्होंने शुरू से ही कुछ काम ऐसे किये हैं कि हमारे मन में उनके प्रति नफरत बढ़ती चली गयी है। मेरे ही नहीं हम तमाम चचेरे, फुफेरे भाई-बहिनों के मन में उनके प्रति नफरत के स्रोते उमड़ते हैं, सबका यही हाल है। हमारे अंचल में यह मान्यता व्याप्त है कि 'हर घर में एक आदमी विध्वंसक पैदा होता है', उसे सच करते थे ये छोटे वाले टकलू दादाजी!

वे चार भाई थे। मेरे दादाजी सबसे बड़े थे और सबसे मेहनती चतुर विद्वान भी। उन्होंने ही अपने छोटे भाइयों को पाला-पोसा था और शादी-ब्याह किये थे। 'ये' सबसे छोटे थे, सबसे लाडले भी। खूब काहिल-आलसी थे.. .. और उड़ाऊ-खाऊ किस्म की प्रवृत्ति वाले भी। पढ़ने-लिखने में इनका मन कभी न लगा। मुश्किल से पाँच क्लास पास की उन्होंने और एक दिन बस्ता समेत सारी किताबें खारे कुआँ में फेंक आये थे। बचपन से ही कुछ ऐसी आदत पड़ गई थी कि ज्यों ही कोई कीमती चीज हाथ लगती, लेकर लम्बे पड़ते और फिर उसे ठिकाने लगा कर ही लौटते।

वे पहली दफा अपनी भौजाइयों को यह बता कर तब भागे थे कि उनके चौक (गौने की विदा) कराने में नाहक देरी किये जाने से वे खफा हैं, दादी ने तो बाद में उनसे मुँह पर ही कह दिया था कि लाला तुमने तो खुंश की मुंश दोहनिया पे दे मारी'। भागने का यह तो महज बहाना था, असल बात थी-कुछ दिन बाहर जाकर मौज-मस्ती करने की इच्छा! सो इन्होंने घर का कुछ जेवर चुराया और बजरिया के सुनार को औने-पौने दाम पर बेचकर भाग

गये। उनकी माँ बिलख उठी थीं, 'पता नई किते गओ मेरो फोआ भरो मोड़ा? देखो तो रे, कोई पकड़ तो नहीं ले गओ, कहीं कोई ठग गिरोह के जाल में न फंस गओ होय?'

यह सुन कर सब भाई लोग परेशान, चिन्तित थे, और रकम चुराने का अपराध भुलाकर सब-के-सब इनकी खोज में लग गये थे। जिले जवार के ज्योतिषियों और गौंड-घटोइयों के दरबार में माथा नवाया सबने।

हमारी दादी सुनाती थीं कि बाद में अचानक एक दिन छोटे अपने-आप लौट आये थे, भाइयों ने खुश होकर उन्हें गले लगा लिया था-सारी गलतियाँ माफ!

....फिर तो इनका हौसला और अधिक बढ़ गया था।

दादी जब झल्लातीं तो बाद की तमाम घटनायें सुनाती थीं, ...रियासत का जमाना था, पुरखों के जमाने की जप्त हो चुकी जमीन की वापसी के लिए मेरे पितामह ने घर के बड़े भाई होने के नाते बरसों तक 'हिज हाईनेस आलीजाह' के इजलास और अदालतों के चक्कर काटे और तकाबी वसूली की अपनी निष्ठा व योग्यता साबित करके किसी तरह पुरखों की जमींदारी लौटा ली थी। चौदह सौ बीघा के चक्क की एक बड़ी जमींदारी हमें वापस मिल गई थी। उन दिनों घर में रोज दीपावली मनायी जा रही थी। सत्यनारायण कथा और कुलदेवता की पूजा के साथ 'रक्कस पूजा' हुई और मोहल्ले भर की औरतें सुबह साँझ मंगल गीत गाने इकट्ठा होकर गाने लगी थीं-

आज दिन सोने को महाराज
सोने की रातें सोने को सब दिन
सोने की कलश धराओ महाराज!

हिज हाइनेस के हुकम के पालन में खेतों पर कब्जा कराने खुद तहसीलदार आया!

....और वे लोग अभी घूम-फिर कर खेत अच्छी तरह देख भी नहीं पाये थे कि बीच खेत में खड़े होकर तैश से भरे छोटे पूछने लगे-'मेरे हिस्से का खेत कौन-सा है, पहले ये बताओ। मैं क्या इस खेत-खलिहान में सड़ूँगा! अपना हिस्सा बेचकर बाहर जाऊँगा और काम-धंधा करूँगा।'

सब हतप्रभ रह गये थे, छोटे की इस अप्रत्याशित सनक को देख कर। अन्ततः भाइयों ने उदास मन से यह बँटवारा स्वीकार किया और मेरे दादाजी ने मन ही मन सौ-सौ आँसू रोते हुए नयी आयी जमींदारी के चार टुकड़े किए, सोचा-'काश मैंने हिज हाइनेस के दरबार में सिर्फ अपने नाम से अकेले ही मुकद्दमा लड़ लिया होता।'

बँटवारा करने में आनाकानी कर रहे अपने तीनों भाइयों से रिसाये छोटे ने जानबूझ कर चौदह सौ बीघा के शामिल-शरीक मौजा में से बिना लकीर खींचे, बिना रंग भरे ही अपने हिस्से के साढ़े तीन सौ बीघा खेतों के लिए खरीददार खोज कर देश के विभाजन के बाद आये विस्थापितों में से एक झगड़ालू व्यक्ति को बेच दिया, जिसने छोटे के चवन्नी हिस्से की बजाय अठन्नी हिस्से पर कब्जा कर लिया। कब्जा छुड़ाने को बन्दूकें उठीं, पुलिस तहरीरें हुईं। खेत पर रात-दिन कलह मचने लगी, दीवानी मुकद्दमे में फंसते तो छुड़ाने में पीढ़ियाँ निकल जातीं सो तंग आकर शनैः शनैः बाकी तीनों को भी अपना हिस्सा बेचना पड़ा था।

....खैर यह तो बीस साल बाद की बात है, तब तो तुरंत ही अपनी अंटी में एक मोटी रकम दबा कर छोटे जाने कहाँ निकल गये थे।

चार महीने बाद किसी ने सूचना दी कि वे दूर उत्तर प्रदेश के झाँसी में हैं और एक आइसक्रीम फैक्ट्री चला रहे हैं। भ्रातृ प्रेम में आकुल मेरे संझले दादाजी इन्हें ढूँढ़ने झाँसी जा पहुँचे थे, घनेरी ठण्ड के मौसम में दस जगह भटकते हुए किसी तरह वहाँ उन्होंने इन्हें खोज भी लिया था। संझले दादाजी को पता लगा कि आइसक्रीम फैक्ट्री तो देखने दिखाने को चल रही थी, भीतर-भीतर हालत पतली थी। छोटे कर्ज से लदे-फदे बैठे थे, कायदे से उनकी सिलक में सौ रुपये भी नहीं बचे थे। आखिर रोज-रोज हलुआ-पूड़ी और मिठाई के शौकीन खाऊ आदमी का खजाना कब तक चल पाता फिर सारा काम नौकरों के

भरोसे तिस पर ठण्ड के दिनों में आइसक्रीम का धंधा, यह सब कितना चल सकता है? तब संझले दादाजी तो लौट आये थे, मगर इनकी चिन्ता मन में लगा लाये थे-'कैसा भी हो, आखिर भाई ही तो है, लाख गलती कर चुका हो, देनदार के रूप में बदनामी तो कुल खानदान की हो रही है।'

....सो बाद में कहीं से इन्तजाम करके तीनों भाइयों ने सारा कर्जा चुकाया था और छोटे को वापस ले आये।

दादी कहती थीं 'छोटे जनम के ही शौकीन-मिजाज हैं। अच्छा खाना और उजला पहनना उनकी आदत है, पर काम करने के नाम पर उनकी नानी मरती है। ऐसे निकम्मे आदमी के खर्चे पूरे कैसे हों?

घर लौटे तो दो-चार दिन ऐसा प्रकट किया मानो, अपने किये पर शर्मिन्दा हों।'

लेकिन महीने दो महीने बाद ही छोटे को पता चला कि बड़े ने एक बगीचा खरीदा है, तो शाम को उनके घर लौटते ही भिड़ बैठे-पुरखों का पैसा उड़ा रहे हो और मुझे मेरा हिस्सा भी नहीं देते!

बड़े ने लाख समझाया कि पुरखों की फूटी-कौड़ी नहीं बची है, ये जो बगीचा खरीदने में पैसा लगा है, वह हम दो भाइयों का अनाज की आढ़त से कमाया हुआ है। मगर विश्वास किसे होना था। गृह-कलह रात भर चली सो अगले दिन ही बड़े-संझले की निजी मिल्कियत में खरीदे गये बगीचा के भी चार टुकड़े हो गये.... और तीसरे-चौथे दिन छोटे के हिस्से का एक टुकड़ा बिक भी गया, ग्राहक तो जैसे उनकी जेब में बैठे होते थे।

उनका का तो वही हाल था कि-थैलिया में नाज, तोलों सहरिया को राज! सो अंटी भारी करके वे फिर देशाटन को निकल गये। छः महीने तक उनका पता नहीं लग पाया था। सब चिन्तित थे कि जाने जीते भी हैं या मर खप गये। घर में नई नवेली बहू बैठी है पर उसे सुरत ही नहीं है। ऐसा लापरवाह आदमी कभी नहीं देखा।

फिर एक दिन कस्बे के एक व्यापारी ने दिसावर से लौटकर सुनाया था कि वह व्यापार के सिलसिले में कानपुर गया था और वहाँ उसने स्टेशन पर छोटे भैया को कुलीगिरी करते पाया है।

समाचार पाकर बड़े भैया तो अकड़ गये-मरने दो दुष्ट को, हम लोग कहाँ तक मदद करें! लेकिन ऐसा संभव कहाँ था, सो बाद में वे अपनी माँ के रोने-गाने और रात-दिन की किल-किल से तंग आकर पर मजबूरन कानपुर गये थे और छोटे की कुलीगिरी छुड़वाकर लौटा लाये थे और कस्बे में उन्हें एक दोस्त के यहाँ मुनीमी सिखाने बैठा दिया था।

लेकिन उनके पैरों में तो भौंरी थी, सो एक जगह कहाँ टिकते थे, जब भी जो मौका मिलता, जो हाथ लगता, ले भागते थे। जिस सेठ के मुनीमी कर रहे थे उन्होंने उस सेठ का ही बहुत-सा माल उड़ा दिया, और अन्ततः बेचारा दिवालिया घोषित हुआ वह! बुजुर्गों ने इस घटना को छोटे से जोड़ कर पुरानी कहावत सुनाई-जहाँ जहाँ पाँव परें सन्तों के तहाँ तहाँ होवें बण्टाधार!

हमने जिन दिनों होश संभाला था, उन्हें घर के एक चर्चित व्यक्तित्व के रूप में पाया था। उनके बड़े भाइयों की तारीफ की जानी चाहिए कि वे उन्हें इतनी हरकतों के बाद भी निभा रहे थे।

हमारे कस्बे में सावन के महीने में राखी के दूसरे दिन भुजरियाँ बदलने की प्रथा है। अपने अंचल की इस प्रथा का आशय यह है कि दरअसल भुजरियाँ (गेहूँ के हरे पौधे) एक-दूसरे को देकर हम अपने मन की शुभकामनाएँ और आदर सामने वाले को सौंपते हैं। भुजरियों के दिन हम सब बुजुर्गों के पाँव छूने जाते थे, तब पिताजी इंगित कर उनके भी चरण छुआते थे। उनका खल्वाट सिर देखते ही मुझे चूल्हे पर रखा तवा याद आ जाता। काले-दुबले थे वे, वैसा ही सलपट सिर। पाँव छुआते वक्त वे प्रायः निस्पृह बने रहते।

बाद में वे अपने परिवार को लेकर इन्दौर पहुँच गये थे, जहाँ से गाहे-बगाहे उनकी सूचनायें मिलती रहती

थीं। कभी पता लगता था कि उन्होंने होटल खोल लिया है, कभी पता चलता कि किराने की दुकान खोली है। बीच-बीच में कस्बे में आकर वे अपना अस्तित्व जता जाते थे। अब उन्होंने एक नया शगल छेड़ा था कि कस्बे में हमारे खानदान के किसी भी सदस्य का कोई जमीन का टुकड़ा खाली नजर आता, वे उसे अपना बताने लगते और जाने कैसे ग्राहक पटा लेते,.... फिर रजिस्ट्री कर के नौ-दो ग्यारह हो लेते!

इसलिये अब सारा घर उनके आते ही सतर्क हो जाता है, उन पर कड़ी नजर रखी जाती है। उनके भय से सब भाइयों ने औने-पौने दाम अपने हिस्से बेच डाले हैं।.... वैसे सच तो यह है कि उनको बेचने के लिये कोई जमीन खाली भी नहीं छोड़ी गई है। उनके द्वारा पैदा की गयी समस्याओं के कारण हमारा समूचा परिवार एक सौ से अधिक मुकद्दमों में उलझा है।

इस बीच उनकी पत्नी स्वर्ग सिधार गई थीं, लेकिन उनके माथे पर कोई शिकन न थी।

पिछली दफा तो वे हमारे घर आकर रुके थे। दरअसल पिछले साल अकस्मात हमारे अभिभावक दादाजी की मौत हुई तो पितृहीन हम चारों भाई, दादाजी के छोटे भाइयों का और ज्यादा सम्मान करने लगे हैं, और इसी नाते घर पधारने पर छोटे की भी हमने पिछली दफा खूब सेवा करी,.... मगर हाय रे दुर्भाग्य! पिछली दफा वे जाते-जाते हमको ही चूना लगा गए। हमारे घर का पिछला हिस्सा बेच गये थे, जिसकी कानूनी उलझन में हम आज तक फँसे हैं।

इस बार उनके आने का समाचार सुनकर मुझे तो गुस्सा ही आ गया-काहे को आ मरते हैं वे हमारे इस कस्बे में? घर के पिछले हिस्से को बेच डालने की हिमाकत से नाराज मेरा मन हुआ कि उन्हें कस्बे से ढूँढ़ निकालूँ और भरे चौराहे पर चार-छः हाथ रसीद कर दूँ। मैं उनकी पिटाई का मनसूबा लिए तीन दिन तक अपने मित्रों के साथ घूमता रहा, पर मुझे वे मिले ही नहीं, जाने कहाँ छिप गये थे। शायद मर्यादा बचना थी हमारे खानदान की।

....सात दिन बाद मुझे वे एक धर्मशाला के दरवाजे पर मिले थे। उस वक्त एकदम उदास और थके मांदे से धर्मशाला से बाहर निकल रहे थे। उनकी काली सपाट चाँद अब भी चिलक रही थी। मैं उन्हें अनदेखा करके निकलने लगा तो मुझे पुकारा "सुन बेटा जय!"

"कहो!" मैंने आग्नेय नेत्रों से उन्हें घूरा।

"बेटा अब तक की मेरी गलती माफ करो, मेरी मदद करो" उनकी आवाज में दर्द था।

"बहुत हो गया यह सब। हर बार तो माफी माँगते हो फिर क्या हो जाता है" मैं पहले जैसा ही कड़क था।

"दरअसल इस बार, मुझे मेरे बच्चों ने घर से निकाल दिया है बेटा। अखबार में इश्तहार भी दे दिया है कि मुझसे उनका कोई रिश्ता नहीं है!" कहते हुए उनकी आँखें नम हो आयीं-"यहाँ रख लो, दो रोटी दोगे तो खा लिया करूँगा, नहीं तो भूखा-प्यासा ही पड़ा रहूँगा।"

मैंने उनके चेहरे को ध्यान से देखा, कहीं यह उनकी इस बार कोई नयी चाल तो नहीं। काली गहरी आँखों में किसी नये षड्यन्त्र की चमक तो नहीं। तवे जैसी काली खोपड़ी पर किसी नये पराठे का तेल तो नहीं। लेकिन मुझे भीतर तक झाँकने के बाद निराशा ही हाथ लगी।

मन के भाव बदले। सहसा मुझे लगा कि वे इस बार सचमुच निरीह दिख रहे हैं, अनायास उन पर दया भी आयी।.... कुछ भी हो अपने ही हैं सगे हैं। मैं कोई जवाब दिये बिना उनके साथ धर्मशाला में भीतर पहुँचा, उनका बिस्तर बँधवाकर धर्मशाला का हिसाब चुकता किया और एक बार फिर कन्धे पर गिरगिट की तरह उन्हें लादे अपने घर ले चला हूँ। ईश्वर खैर करे!

89, ओल्ड हाऊसिंग बोर्ड कालोनी,
बस स्टैण्ड, दतिया,
मध्य प्रदेश- 475661
मो0- 9826689939

सुगन्ध

➲ रेणु उपाध्याय

असहनीय उष्णता को सहनीय बनाने के लिए प्रयुक्त विद्युत आश्रित सभी साधन विद्युत की अनुपस्थिति में खटकने लगे।

नित नए कारणों से विद्युत आपूर्ति का अधिकांश बाधित ही रहना.... बढ़ती उम्र के कारण नयी-नयी बीमारियों का शरीर को घेर लेना.... ये सभी कारण घर में अकेली शीला को बहुत परेशानी में डाल रहे थे। आज सत्यम शहर से बाहर गया हुआ है। और मयंक अपने दोस्त की बर्थडे पार्टी में। अकेलापन पाते ही चिन्तन के समुद्र में डूबने, उतराने लगी। आज फिर अतीत के पृष्ठ उसके स्मृति पटल पर खुल-खुलकर उड़ने लगे.... अचानक ही असमय पति का परलोक चले जाना, जाने वह कैसा पेट दर्द था कि ठीक हो ही न सका बल्कि राघवेन्द्र को अपने साथ ही ले गया। बचत का एक बड़ा हिस्सा खर्च हो गया राघवेन्द्र के इलाज में। दिल्ली जैसे महानगर में जीवन-यापन करना, दो छोटे बच्चों को लेकर।

हमारा प्रेम विवाह था इसलिए राघवेन्द्र के परिवार ने मुझे कभी स्वीकार नहीं किया था।

सो राघवेन्द्र के जाते ही उनके परिवार ने सब सम्बन्ध समाप्त कर दिए।

सत्यम और मयंक, दोनों बेटों का लालन-पालन, पढ़ाई-लिखाई और उससे भी अधिक अपनी चिन्ता। चिन्ता अपनी नहीं, अपने घर की आर्थिक स्थिति की, अपनी युवावस्था की, अपनी सुन्दरता की। आस-पास के लोग कहते कि शीला तेरी सुन्दरता कहीं तेरी दुश्मन न बन जाए।

उन सबकी ऐसी बातें सुनकर मन बैठ जाता। एक तो वैसे ही जीवन में इतना संकट, उसके बाद समाज के लोगों द्वारा मन में भरा जाने वाला अज्ञात-सा भय। जैसे-तैसे पति की मृत्यु के बाद एक साल बीत गया। पापा-मम्मी ने ही सम्हाला सब कुछ, वह हम तीनों प्राणियों को अपने साथ घर चलने के लिए कहने लगे, लेकिन मुझे ठीक नहीं लगा। घर में दो भाइयों के परिवार के साथ इस परिस्थिति में रहने से मेरे बच्चों के कोमल हृदय पर अच्छा प्रभाव नहीं पड़ सकता, वे हीन भावना के शिकार हो जाएंगे। और कितना भी ध्यान से रह लो, पर कहावत है कि "चार बर्तन होंगे तो खटकेंगे ही", फिर इस सबका असर पापा-मम्मी पर आएगा, जो मैं नहीं चाहती।

पर हर घड़ी मन में यही प्रश्न कि इस तरह से... आखिर कब तक? क्या पूरा जीवन ऐसे ही, इन्हीं हालात और परिस्थितियों में बीतेगा? क्या मैं सत्यम और मयंक को अच्छा जीवन देकर, अच्छा इंसान बना पाऊँगी। इसी उहापोह में उसकी निर्मला बहन व उनकी बेटी मृदुला से भेंट हुई। मृदुला ने पूछा सत्यम और मयंक की पढ़ाई कैसी चल रही है, अगर उनको पढ़ाई में कोई परेशानी हो तो वे

मेरे पास आ जाया करें, मैं दोनों को पढ़ा दूँगी। यह कहते हुए वह कमरे से बाहर निकल गई। मृदुला के चले जाने के बाद चाय का कप मेरे हाथ में पकड़ाते हुए, निर्मला बहन बोली-"शीला बहन कुछ तो तुम्हारे मन में चल रहा है, कहती क्यों नहीं? मुझे अपनी बड़ी बहन मान कर अपना मन हल्का कर सकती हो।"

निर्मला बहन का इतना अपनापन देखकर आँखें डबडबा आयीं, शब्द मानो कण्ठ में जम से गए.... चाय का एक सिप लेकर कप को टेबल पर रख करके निर्मला बहन से कहने लगी-"बहन! मैं अपना और अपने बच्चों का जीवन-यापन आत्मनिर्भरता से करना चाहती हूँ।" निर्मला बहन बोली-"जो भी कहना चाहती हो, खुल कर कहो बहन, मैं तुम्हारे साथ हूँ, जो बन पड़ेगा, मैं जरूर करूँगी।"

मैंने हिम्मत जुटा कर कहा-"मैं घर में ही रहकर कुछ कार्य करना चाहती हूँ, आपसे सहयोग चाहिए कि, आप मेहरा भाई साहब से मेरी ओर से यह बात रखें कि, उनके कॉलेज में बाहर से पढ़ाई करने वाले विद्यार्थियों को बताएं कि, सही समय और उचित मूल्य पर घर का बना हुआ शुद्ध और ताजा भोजन की सेवा देना चाहती हूँ। मैं टिफिन कैरियर की व्यवस्था, घर से शुरू करना चाहती हूँ, जिससे मैं घर से ही कार्य करके अपने बच्चों का ठीक तरह से ध्यान भी रख सकती हूँ और आत्मनिर्भर भी बन सकती हूँ।"

निर्मला बहन कहने लगीं-"अरे वाह.... शीला बहन! बहुत ही अच्छा आइडिया है, मैं आज ही शाम को मेहरा जी से बात करके पक्का बताती हूँ। तुम निश्चिन्त होकर घर जाओ। भगवान सब भला करेंगे।"

दूसरे दिन शाम को जब मेहरा भाई साहब कॉलेज से लौटे तो, उन्होंने मृदुला को भेज कर मुझे बुलाया और खुश होकर कहने लगे कि मैंने कॉलेज में विद्यार्थियों को बता दिया है, चार विद्यार्थी तो आज ही हाँ कहकर कल से टिफिन लेने को तैयार हैं लेकिन, मैंने एक तारीख से शुरू करने को कहा है। आज पच्चीस तारीख है, इस महीने के बचे हुए दिनों में अपनी तैयारी करो और एक तारीख से टिफिन सर्विस शुरू, तब तक और भी आर्डर आएँगे, सही संख्या का पता लग जाएगा।

पहले महीने में सात, दूसरे में पन्द्रह और इसी तरह आर्डर बढ़ते-बढ़ते चौव्वालीस तक पहुँच गए। जब तक कम आर्डर थे, तब तक मेहरा भाई साहब ने अपने कॉलेज के माली की सहायता से टिफिन भिजवाकर सहयोग किया। फिर तो मुझे एक रसोई के लिए महिला सहायक और टिफिन भेजने के लिए एक रिक्शे वाले को भी रखना पड़ा। बड़ा संतोष मिलता है किसी को काम देकर, किसी के काम आकर। ग्यारह वर्षों तक अनवरत यही क्रम चलता रहा।

दिन बदलने लगे। सत्यम और मयंक दोनों की पढ़ाई बहुत अच्छी तरह चल रही थी। सत्यम बी.टेक. कर चुका, मयंक ने बारहवीं की परीक्षा पास कर ली।

मोबाइल की घण्टी से अचानक हड़बड़ा कर उठ बैठी शीला। फोन सत्यम का था, बहुत खुश और चहकते हुए बता रहा था कि वह गुड़गाँव जिस कम्पनी में साक्षात्कार के लिए गया था, उसे वहाँ नियुक्ति पत्र मिल गया है।

शीला की आँखों से खुशी के आँसू बहने लगे। दोनों हाथों को जोड़कर घर के मन्दिर के आगे खड़ी होकर प्रभु का धन्यवाद करते-करते कहने लगी, राघवेन्द्र देख रहे हो न? मैं हारी नहीं हूँ....

पता - म.नं. 526, माता गली,
बिहारी पुरा, मथुरा (उ.प्र.)
पिन- 281001
मो.- 6397491306

खुशियाँ लौट आयीं

० कृष्ण चन्द्र महादेविया

सिकन्दर धार के सामने बहुत विस्तृत मैदानी भू-भाग था। छोर पर विशाल सुन्दर और लुभावना करीब सौ बीघे का हरा-भरा वन था। सुन्दर-सुन्दर पंछी और पशु यहाँ प्रायः दिखाई दे ही जाते थे। इस वन के साथ-साथ प्राकृतिक सौन्दर्य से भरपूर कांसा ग्राम आबाद था। कांसा ग्राम के लोगों पर एक तवे की रोटी क्या मोटी क्या छोटी कहावत हू-ब-हू चरितार्थ होती थी। पूरा ग्राम कृषि कार्य करने वालों का था, पर कुछ पुरुष और स्त्रियाँ सरकारी सेवा में भी थे। सजे-धजे कच्चे-पक्के घरों का गाँव कांसा स्वच्छता और गेहूँ की फसल के लिए दूर-दूर तक मशहूर था। वन की समीपता ने इस ग्राम को चार चाँद लगाए हुए थे। पश्चिम की ओर कल-कल बहती सुकेती नदी तो कांसा ग्राम का प्राण थी। सुकेती नदी के बेशुमार रेत-बजरी और पत्थरों पर रंगे सियारों की लालची निगाहें लगी रहती थीं किन्तु कांसा ग्राम के प्रकृति प्रेमी लोगों ने कभी भी स्वार्थियों की दाल नहीं गलने दी थी। इसी ग्राम में था लाजवंती का घर।

लाजवंती अपने नाम के अनुरूप ही शीलवती व गुणों की खान थी। वह सच्ची, मेहनती, दयावती और सरल हृदय की महिला थी। ब्याह-शादी, लुगडू-गंतरयाले में उसकी उपस्थिति सभी को भाती थी।

मंगनी के दौरान लाजवंती ने रूपना प्रथा को तोड़ा था। रूपना प्रथा का मतलब था होने वाली वधु को मंगनी के दौरान मंहगे-मंहगे उपहार भेंट करना। अनेक बार रूपना न दे पाने के कारण अच्छे-अच्छे रिश्ते, पारिवारिक सम्बन्ध टूट जाते थे। औचित्यहीन प्रथा, जिससे गरीब लोग ऋण लेने को मजबूर हो जाते थे, को गाँव में पहली बार लाजवंती ने तोड़ा था। बल्कि उसकी होने वाली वधु के मायके वालों ने भी लाजवंती के स्वभाव को देख पूरा-पूरा साथ दिया था। माधव और चमेली का जब विवाह हुआ तो सारे ग्राम के लोग हैरान रह गए। कई मनचलों के हृदय में तो साँप लोट गया। बहुत से युवक तो ऐसे थे, जो चमेली से शादी करने को पलक पाँवडे बिछाए थे। चमेली के माँ-बाप जुबान के पक्के निकले। उन्होंने लाजवंती के अतिरिक्त दूसरों को घास तक न डाली। यद्यपि कई लोग उनके घर नाता-रिश्ता लेकर गए थे। लोगों को भरोसा ही नहीं था कि निपट बुद्धू माधव को कोई लड़की देगा भी। किन्तु चमेली के माता-पिता ने सीधे-साधे माधव को ही लड़की ब्याह दी। माधव कोई सात जमात पास था। रामलीला के रावण की तरह उसकी बड़ी-बड़ी मूँछें उसका चेहरा रौबीला बनाती थी, वह तो था निरा बैल-बुद्धि। दुनियादारी तो उसके लिए जैसे काला अक्षर भैंस बराबर थी। घर में उसकी माँ लाजवंती, एक गाय, दो बैल और गौशाला के अतिरिक्त चार कमरों का बरामदे सहित

साफ-सुथरा घर था। साथ ही करीब दस बीघे खेती की जमीन थी। जमीन में वे अलग-अलग अनाज और सब्जियाँ उगाते थे। खाली समय में कहीं न कहीं दिहाड़ी पर कार्य कर लेता था। माँ और बेटा बहुत सुख-चैन से दिन व्यतीत कर रहे थे। जब चमेली घर आयी तो घर में और रौनक आ गई। उसकी पाँयजेब की छम-छम पर आँगन से लेकर पनिहार तक में भी सभी को आकर्षित करती थी। उसके नाक की नथिनी और काँटों का लिश्कारा तो आदमी को गश ले आता था। ग्राम की कई औरतें माधव की माँ से मन ही मन बहुत खार खाती थीं। चमेली को देखकर वे अपने को मन ही मन गालियाँ बकती थी। वे अपने भाग्य को बड़ा कोसती थी। गोरी-गोरी सुन्दर, अनार की तरह भरी-भरी, शहद की तरह मीठी और काँसे की तरह खनकती आवाज, हाथ-पाँव, नैन-नक्श, दंत पंक्तियों का जैसे कोई मोल न था। चमेली बातचीत करने में बड़ी निपुण थी। कम उमर होने के बावजूद भी वह चालाक थी बातें करने का ढंग व आँखें झपकाने के तरीके से वह सभी को मोहित कर लेती थी। सीधा-सादा माधव चमेली को बहुत चाहता था। चमेली भी माधव को बहुत पसन्द करती थी परन्तु कुछ ही दिनों में वह अकस्मात ही माधव से उकता कर माधव से कन्नी काटने लग गई थी। सच ही कहते हैं चार दिन की चाँदनी फिर अंधेरी रात।

शादी के बाद करीब आठ-नौ महीने के बाद चमेली ने माधव को पासंग के बराबर भी समझना छोड़ दिया था। किन्तु माधव के मन में कुछ भी नहीं था, वह पहले की तरह मस्त रहता था। चमेली की सास लाजवंती दूर की कौड़ी रखती थी। सब कुछ जानते हुए भी उसने चमेली को माधव को पूछना छोड़ दिया। लाजवंती ने सोचा कि जब बच्चे हो जाएंगे तो स्वयं ही अकल आ जाएगी। क्या जाने अंधा जब तक सिर न बजे कंधा। जब सिर में चोट पड़ेगी तो अवश्य अकल आएगी। लाजवंती अपने घर की बात जरा भी बाहर नहीं कहती थी। उसका स्वभाव व बातें देखकर आस-पड़ोस की औरतें भी उससे डरती थीं तथा झिझक भी रखती थीं। माधव की माँ की घर-गृहस्थी व सुख-शान्ति देखकर उनके हृदय में साँप लोट जाया करता था। वे भितरघात करने को मौका तलाश रही थी। जब उनकी कोई तरकीब सफल न हुई, तो उन्होंने चमेली को अपने घेरे में ले लिया। लारे-लप्पे लगाकर उन्होंने चमेली को अपने काबू में कर ही लिया। वे उसे अपनी जवानी का भरपूर फायदा उठाने को कहती थी। उसकी प्रशंसा के खूब पुल बाँधती थी। भला प्रशंसा किसे अच्छी नहीं लगती? चमेली को भी वे औरतें अपनों से बढ़कर लगने लगी थीं। लकड़ी-घास, घाट-घराट या पानी लाने जाते वक्त उसका आँख मट्टका भी चल पड़ा। मनचले अपने बर्तन में लड्डू देखकर खुशी की सीमा से भी बाहर हो चले थे। लाजवंती चमेली को बहुत प्यार से समझाती, किन्तु वह एक कान से सुनती, दूसरे से निकाल देती थी। अपने रूप-सौन्दर्य में खोई रहने वाली चमेली को पड़ोसिनों की प्रशंसा ही अच्छी लगती थी। मुस्टण्डों का भरा जिस्म उसे सुहाने लगा था। वह अपनी मर्जी की मालकिन बन बैठी थी। उसे अपने घर-मायके की मान-मर्यादा, ओरा-परा सब भूल गया था। सच कहते हैं कि हरा-हरा चरता पशु और मेले जाती स्त्री पीछे नहीं देखते हैं।

रिमझिम वर्षा लगी हुई थी। चमेली का सिर अपनी सास लाजवंती की गोद में था, जो उसके सिर के जुंए निकाल रही थी। वैसे जुंए सिर में थी ही नहीं। लाजवंती का बहू से बातें करने का बहाना था। लाजवंती ने बड़े प्यार से कहा-

"बहू, बेटी एक बात कहूँ?"

"जी, कहिए न।" चमेली ने अपनी बड़ी-बड़ी आँखें फेरते सिर उठा कर अपनी सासू को देखा फिर बड़ा मासूम चेहरा बना कर पुनः गोद में सिर रख दिया। जैसे वह

सारे संसार की इकलौती भोली-भाली महिला हो।

"बेटी, औरत घर की लक्ष्मी होती है। औरत का पर्दा एक बार उठ गया, तो सदा के लिए उठ गया। आदमी की इज्जत गई तो सब कुछ चला जाता है। तुम स्वयं पढ़ी-लिखी हो मैं क्या कहूँ। पर बेटी माधव से दूर-दूर रहकर घर-गृहस्थी को आँच जरूर आएगी। पति-पत्नी साइकिल के दो पहिए होते हैं। कोई एक खराब हो जाए तो साइकिल रुक जाती है।" लाजवंती ने बड़े प्यार से कहा। एक क्षण तो चमेली को कुछ न सूझा पर फिर उसने सुनी अनसुनी कर दी। सासू माँ की बातें उसे पूरी की पूरी महत्त्वहीन लगी थीं। बड़ी चालाकी से उसने वार्ता का रुख बदल कर अपने मायके की प्रशंसा की पिटारी खोल दी थी। लाजवंती को मन मसोस कर रहना पड़ा था, परन्तु उसने धीरज नहीं खोया था।

माधव की माँ दस-पन्द्रह दिन के लिए अपने भाई के घर गई। जाने से पहले उसने अपनी बहू चमेली को फिर स्नेह से समझाया था किन्तु चमेली ने मुस्कुरा कर टाल दिया था। सास के जाने पर चमेली की पाँचों उंगलियां घी में हो गयीं। माधव की परवाह न करते वह हर समय घर में बन-ठन कर रहती थी। मनचले और लफंगे भंवरों की तरह घर के आस-पास मंडराने लग गए थे। आस-पड़ोस की महिलाएँ तो अब उसके सगों से बढ़कर हो गई। वे अब उसे माधव को छोड़ने की भी सलाह देने लग गई थी। वे चमेली की खूबसूरती की तारीफ कर उसे अधिक से अधिक युवकों को अपनी ओर आकर्षित करने का मशविरा बार-बार गाहे बगाहे देती थी। उनके घेरे में आयी अब तो चमेली पूरी तरह से उनके चुंगल में फंस गई थी। उनकी हर ऐरी-गैरी सलाह को भी आँख मूँद मानने लगी थी। एक दिन वह राह से भटकी तो फिर भटकती ही चली गई। माधव बेचारा कुछ भी न कहता था। उसके सीधेपन का चमेली खूब फायदा उठाकर बहुत उच्छृंखल हो गई। सच तो यह था कि चमेली की पाँचों उंगलियाँ घी में ही रहने लगी। भंवरों का मंडराना और रसपान उसे सुहाने लग गया था। उसकी हेकड़ी बढ़ती ही गई थी। उसके पाँव धरती से ऊपर ही उठे रहते थे।

माधव की माँ जब घर वापिस आयी तो बहू का बदला रूप देखकर बहुत दुःखी हुई। लाजवंती का माँ की तरह व्यवहार का भी चमेली पर कोई असर नहीं हुआ, बल्कि उसने अपनी सास को भी अपने रूप-जवानी की खूब अकड़ दिखाई। उसने बहू की मर्यादा लाँघते यहाँ तक कह दिया कि उस पर एक से एक अमीरजादे ब्याहने को ही नहीं जान देने को भी तैयार बैठे हैं। उसने तो माधव को छोड़ने की बात भी कह डाली। सास को चुप देखकर अपनी जंघा ऊपर रखने की पूरी-पूरी कोशिश की। सच ही कहते हैं कि क्या जाने अंधा जब तक उसे ठोकर नहीं लगे।

लाजवंती को बहू की बातें तीर-सी चुभीं किन्तु उसने अपना आपा नहीं खोया। ठण्डे लोहे को एकदम आकार देने का समय नहीं था। समय और स्थिति देखकर उसने चमेली को शान्ति से कहा-

"ये सब तो ठीक है बेटी, तुम बहुत सुन्दर और चतुर हो। तुम पर कई-कई मर्द जान देने को तैयार बैठे हैं। पर बहू, चार दिन की चाँदनी फिर अंधेरी रात होती है। औरत घर का शृंगार होती है, वह घर बनाती है तो वह ही घर गिरा सकती है। बेटे जिस घर को सौ मई मिल कर गिरा नहीं सकते उसे अकेली औरत कनिष्ठा उंगली से गिरा देती है किन्तु हाँ, तुम जरूर जवानी का गरूर दिखाओ। माधव को छोड़ना चाहती हो तो जरूर छोड़ो। तुम हो ही अपनी मर्जी की मालिक। पर इतना जरूर कहती हूँ, बेटी, तुम अपने चाहने वालों को एक बार परखो तो सही। इनका दिल तो देखो, वे तुम्हें सच में चाहते हैं या नहीं। कहीं ऐसा न हो बहू कि तुम धोबी के कुत्ते की तरह घर की रहो न घाट की। वैसे बेटी, अपना पति ही सच्चा साथी होता है। वह ही काम आता है।"

चमेली थोड़ा नर्म पड़ गई। अपनी सास का शान्त और धैर्यवान व्यवहार देखकर वह सोचने को मजबूर हो गई। अभी उसकी आँखों का पानी पूरी तरह मरा नहीं था। उसने अपनी सास से बहुत प्यार से पूछा-

"माँ जी, किस तरह उनकी परख करूँ?"

लाजवंती कुछ देर तक सोच-विचार करती रही, फिर स्नेह से बोली-

"तुम दो दिन तक घर से बाहर न निकलना। तीसरे दिन घर से बाहर निकलना। तीसरे दिन कोदा पीस कर अपने चेहरे पर जिस्म पर मल लेना और आँगन में बीमारी का बहाना कर सो जाना। तुम्हें खुद पता चल जाएगा बेटी, तुम्हें कौन चाहता है कौन नहीं।"

चमेली ने सासू की बात मान कर वैसा ही किया और बाहर सो गई। उसके चेहरे और जिस्म पर लगा कोदा ऐसा लगता था जैसे उसे कोढ़ हो गया हो। उस पर मक्खियाँ भिनभिनाने लग गई थी। उसको देखने के लिए पास-पड़ोसी आने लगे। आते ही कुछ महिलाएँ-"ओह, इसे तो कोढ़ हो गया है। इस रंडी को तो ऐसा ही होना था।" उपेक्षा से कह कर थूकते-थूकते वे चलती बनीं। जो औरतें उसकी प्रशंसा करती थीं, उसको उकसाती थीं वे ही उसे अब तरह-तरह के ताने मारती जाती, नफरत से उसे देख, माधो की तारीफ करती थी। चमेली को तो अब काटो तो खून नहीं की बात लागू हो चली थी। औरतों के जाने के बाद मनचले और आशिक भी देखने पहुँचे। जब उन्होंने चमेली को देखा तो वे ऐसे उछले जैसे उनके पाँवों के नीचे गन्दगी आ गई हो। फटे-फटे जिस्म पर भिन्न-भिन्न मक्खियों को देखकर उन्होंने घृणा से नाक-भौं सिकोड़ लिए थे। फिर उपेक्षा से धरती पर थूक दिया था। उस वक्त चमेली का मन जोर-जोर से रोने को हो चला था। किन्तु उसने जीभ को दाँतों से जकड़ कर रुलाई रोक ली। उसके चहेते उसे गन्दी-गन्दी गालियाँ देते परन्तु निकल गए जैसे उन्हें कोढ़ न हो जाए। सयाने कहते हैं कोढ़ का रोग और पुत्र का वियोग आसानी से नहीं जाते। मनचलों में से एक-दो माधव के भोलेपन की प्रशंसा करते हुए गए थे।

मारे शर्म से चमेली गड़ी-गड़ी जाती थी। उसका सारा घमण्ड बर्फ की तरह पिघल कर बिखर गया। बलपूर्वक रोकी गई रुलाई अब फूट ही पड़ी, वह बिलख-बिलख कर रोने लगी। उसकी आँखें गंगा-जमुना बन गई थी। संध्या के समय काम से लौटे माधव ने जब उसकी हालत देखी तो बहुत दुःखी हुआ और तुरन्त उसके पास बैठ गया। उसके आँसू पोंछते-पोंछते उसे ढाँढस बंधाने लगा। चमेली माधव को टुकर-टुकर देखने लगी थी किन्तु उसके आँसू पोंछते-पोंछते उसे ढाँढस बंधाने लगा। जब माधव उसे डॉक्टर के पास ले जाने को तैयार हो ही गया तो उसकी माँ लाजवंती भी आ पहुँची। उसने माधव को समझाया-बुझाया और पानी गर्म करने के लिए भेज दिया।

चमेली लाजवंती से नजरें न मिला सकी, बस रोती ही जाती थी। फिर उसने हिचकी भरते अपनी सास के पाँव पकड़ कर बार-बार क्षमा याचना की। उसने अपने को सुधार कर परिवार को खुशहाल रखने का अपनी सास के सामने दृढ़ संकल्प दोहराया। लाजवंती मौन उसके पश्चाताप के आँसुओं को बहते देखती रही। जब चमेली ने उसे पाँव न छोड़े तो उसने उसे उठाकर गले लगा लिया, उसकी आँखें भी भीग आयी थीं। उसने उसके सिर पर हाथ फेरते हुए बहुत स्नेह से कहा-

"बेटी, सुबह का भूला अगर शाम को घर लौट आए तो उसे भूला नहीं कहते हैं। अब तो तुम्हें अपने व पराए की पहचान हो ही गई है। अपना पति तो अपना ही होता है। बेटी, थोड़ी देर के सुख के लिए हम अपना मन और पूरी जिन्दगी अंधकार से भर दें तो यह कतई समझदारी नहीं है।.... अच्छा, अब तुम नहाने चली जाओ फिर तीनों खूब सारी बातें करेंगे।" चमेली चुप-चाप नहाने

चली गई। जब वह नहा-धोकर लौटी तो पहले की तरह सुन्दर और आकर्षक हो गई थी। अब उसका अन्तःकरण भी उजला-उजला हो गया था। उसने अपनी सास के पाँव एक बार फिर स्पर्श किए और घर को घर बनाने का पक्का इरादा कर लिया था। लाजवंती ने उसे गले से लगा लिया। माधव ने दोनों को मुस्कुराते हुए देखा और वह पशुओं की सेवा करने खुशी-खुशी चला गया। वह पत्नी की पहले हालत और अब फिर आए निखार पर कुछ भी सोचना नहीं चाहता था। उसे तो अपनी माँ, पत्नी, खेत और पशुओं की अच्छे से देखभाल करनी थी।

धार के उस पार पूर्णिमा का चाँद निकल आया था। उजली-उजली चाँदनी धरती पर फैल गई थी। सुरभित समीर सरगम गाने लग गई थी। झींगुर सितार बजाने लगे तो मेंढक तबले की संगत देने लगे थे। तारे मंद-मंद मुस्कुराते लाजवंती के घर में फिर से खुशियाँ लौट आने पर प्रसन्नता जाहिर कर रहे थे। पीपल और आम के वृक्ष सदा-सुहागन का आशीर्वाद हिलते हुए दे रहे थे। लाजवंती का घर खुशियों से जगमगा रहा था।

डाकघर महादेव, सुन्दरनगर,
जिला-मण्डी (हि.प्र.)
पिनकोड-175018
मो0- 8219272342

आओ हे समवेत प्रार्थना करें धरा जन,
सृजन कर्म से, रचना भ्रम से, -जो चिर पावन,
रत तन की प्रार्थनाः बुद्धि से, -जो चिर पावन
रत तन की प्रार्थनाः बुद्ध से, -जो प्रकाशमय
मानस की प्रार्थनाः प्रेम से, -जो निःसंशय
मौन हृदय प्रार्थनाः समर्पण से, -जो तन्मय
आत्मा की प्रार्थनाः शक्ति इच्छा से दुर्लभ-
जो प्राणों की मुक्त प्रार्थना! आओ हे जन,
युक्त प्रार्थना करें पूर्ण हो मानव जीवन!
मानव को समझो हे, देवों के आराधक,
मानव के भीतर ईश्वर ही अविरत साधक
महत् जगत जीवन की इच्छा ही प्रभु का पथ
स्वर्ण सृजन चक्रों पर नित बढ़ता प्रभु का रथ!
अणु उद्जन की प्रलयंकर छाया में प्रतिक्षण,
निर्भय, नव निर्माण करो हे जीवन चेतन।

-सुमित्रा नन्दन पंत

दिदिया

➲ रंजना जायसवाल

जेठ की तेज धूप से खोपड़ी चटकने लगी थी। सूरज के डूबने और चाँद के उगने का दूर-दूर तक पता नहीं था। पिंकिया ने धूप से काली हो चुकी अपनी देह की ओर देखा। चमड़ी कई जगह से धूल, धूप और गर्मी से चटक गई थी। जेठ के थपेड़ों की वजह से चुहचुहाता पसीना उन दरारों में आ कर फंस जाता और नमकीन पसीने की वजह से पिंकिया के मुँह से एक सिसकी निकल जाती। तन पर लिपटे चिथड़ों में इतना जोर कहाँ था जो धूप की आब को रोक सकता। तन पर कपड़ों के नाम पर था ही क्या? उम्र के साथ शरीर बढ़ रहा था या शायद कपड़े छोटे हो रहे थे। बापू का जांघिया और अम्मा का ब्लाउज ही उसका परिधान था। अम्मा की साड़ी को दो फाड़ कर उसने दुपट्टे की तरह फेंटा मारकर तन को ढंक लिया था। बापू के गमछे को गोल-गोल लपेट कर वह सर पर रख लेती और उस पर ईंट और तसला ढोती।

आज सुबह से बउवा बहुत रो रहा था। उसने बापू की लुँगी को बिछा बउवा को लिटा दिया। आसमान से अंगार बरस रहे थे। इंसान के साथ-साथ धरती भी तप और झुलस रही थी। पिंकिया ने बउवा को सीने से चिपका लिया। वो चाहती थी सूरज आज जल्दी से ढल जाए पर चाहा हुआ होता कहाँ है। वह खुद ही अपनी सोच पर हँस पड़ी। सच कहूँ तो वह अपने लिए यह नहीं चाहती थी पर बउवा! कितनी जान ही थी उसमें.... कैसे बचाती इस धूप से.... कल से उसका शरीर तप रहा था।

"लू लग गई है। ये दवाई लिख रहा हूँ। आराम की जरूरत है। बाहर धूप में लेकर न निकलना, धूप, गर्मी से बचाना।"

"बाहर न निकलना....!"

डॉक्टर ने यही तो कहा था। किस के सहारे छोड़कर निकलती। पिंकिया ही उसकी अम्मा थी, बापू थी, भाई थी और दिदिया तो थी ही.... आज अम्मा बहुत याद आ रही थीं। वह होती तो सब कुछ कितनी आसानी से संभाल लेती। उसकी अम्मा फुलवा फूल की तरह ही सुंदर थी, उसका बापू मोहन जान छिड़कता था अपनी जोरू पर.. .. उसने अम्मा की पसन्दीदा लाल साड़ी का टुकड़ा तन पर लपेट लिया। बापू दीपावली पर लाए थे, उस साड़ी में बापू के प्यार और अम्मा की खुशबू थी।

पिंकिया बउवा को लादे काम पर निकल गई थी। आज चूल्हे की लकड़ी भी खत्म हो गई थी, सुबह बड़ी मुश्किल से कागज और सूखी पत्तियों से चूल्हा जला कर काली चाय बनायी थी। दूध वाली चाय देखे तो जमाना हो गया था। बउवा को दवा देनी थी, पिंकिया बउवा की माँ तो तो बन गई थी पर दुधमुँहे भाई के लिए माँ का दूध कहाँ से लाती। चाय के सहारे चम्मच से घूँट-घूँट दवा पिलायी थी।

"जल्दी से पी ले बउवा वरना साधू बाबा आ जाएगा।"

अम्मा ऐसे ही तो डराती थी उसे.... वो हमेशा सोचती अम्मा कहती थी साधू बाबा लोगों के हाथों में बड़ी शक्ति होती है। राजा को रंक, आदमी को जानवर बना दे। कितनी बार उन्होंने वो राजकुमारी को शिला बनाने वाली कहानी भी तो सुनाई थी। काश उसकी जिन्दगी में भी कोई ऐसा बाबा आता जो सब कुछ पहले जैसे कर देता। न जाने क्यों वो मुस्कुरा दी थी।

साइट पर पड़े ईंटों से ही उसने छोटा-सा घर बनाया था। पूरी गृहस्थी थी उसकी.... गुड्डे-गुड़ियों से खेलने की उम्र में, उम्र से पहले ही बन गई थी वो गृहस्थन और दिदिया कहीं पीछे छूट गई थी। आज भी वो दिन भूले नहीं भुलाता था। ठेकेदार ने बहुत खराब माल लगाया था। सब यही तो कहते थे। एक मौसम भी न झेल पाया।

"ओ पिंकिया जरा बउवा को लेकर बाहर बैठ जा बड़ी उमस है। हवा थोड़ी तन को लगेगी तो उसे अच्छा लगेगा।" और वो बंदरिया की तरह अपने छोटे भाई को चिपकाए सीढ़ियों से नीचे उतर गई थी।

"संभल कर बिटिया कहीं बउवा गिर न जाए।"

"अम्मा चिंता न करो हम हैं न...."

उसने मुस्कुरा कर कहा था, शायद वो आखिर दिन था जब वह मुस्कुराई थी। पिंकिया के बाऊ को तेज बुखार था। अम्मा रात से गीली पट्टी रख रही थी। ननकू वहीं बगल में मौरंग वाले रंगीन पत्थरों से खेल रहा था। पाँच मंजिला बिल्डिंग उसकी आँखों के सामने भरभरा के गिर गई। दूसरे दिन अखबार के एक कोने में सूचना छपी थी। शहर की नवनिर्मित इमारत गिरी। दो पुरुष, एक औरत और एक बच्चे की मृत्यु.... यह अखबार वाले भी कितनी झूठी खबर छापते हैं। उस दिन एक बच्चे की मृत्यु नहीं हुई थी, उस दिन तीन बच्चों की मृत्यु हुई थी। पिंकिया भी जिन्दा होकर कहाँ जिन्दा थी। कम उम्र में माँ-बाप का साया सर से उठ चुका था। खेलने की उम्र में, माँ-बाप से लाड़-लड़ाने की उम्र में वह अपने छोटे भाई की माँ बनी घूम रही थी। वो दिन था और आज का दिन तब से लेकर आज तक वह बउवा को संभाल ही रही थी। आज भी उसे अपने बचपन की धुंधली-सी यादें थीं।

मुम्बई शहर सपनों का शहर.... सपने देखने से भला कोई किसी को कैसे रोक सकता है। पिंकिया के बाऊ मोहन अपनी जोरू के साथ शहर में रोजी-रोजगार की तलाश में चला आया था। गाँव के कई परिवार गाँव छोड़कर मुम्बई चले आये थे। करते भी तो क्या.... मुट्ठी भर जमीन, हर साल बाढ़ के पानी में डूब जाती। जब से बाँध बना था सरकार ने वो जमीन भी छीन ली थी। जमीन के बदले में थोड़ा मुआवजा जरूर मिला था पर उससे जिन्दगी तो नहीं कट सकती थी। यहाँ रहते-रहते उन्हें बरसों बीत गए थे, पिंकिया, ननकू और बउवा यहीं पैदा हुए थे। जीवन में खेती के सिवा कोई काम नहीं किया था, इस अनजान शहर में कोई काम देता भी तो कैसे पर कहते हैं न मुम्बई में कोई भूखा नहीं सोता। मोहन ने ठेकेदार के हाथ-पैर जोड़कर बेलदारी का काम शुरू कर दिया। शुरू-शुरू में तो बहुत दिक्कत हुई। इस अनजान शहर में जोरू को कहाँ छोड़े। तब फुलवा ने ही कहा,

"मैं बैठ कर क्या करूँगी तुम्हारे साथ मैं भी चलूँगी। इस महंगाई के जमाने में एक आदमी के कमाने से कैसे काम चलेगा।"

फुलवा ने पल्लू को समेटकर कमर में खोंस लिया और मोहन के गमछे को गोल-गोल घुमाकर अपने सर पर रख लिया।

"ए ठेकेदार बाबू! हम भी काम करेंगे।"

ठेकेदार ने एक अजीब-सी निगाह से फुलवा को देखा, फुलवा एक क्षण को असहज हो गई थी।

"क्या नाम है तेरा...."

"फुलवा...."

"फुलवा....!"

ठेकेदार ने मन ही मन बुदबुदाया। ठेकेदार की लालची निगाहों ने ऊपर से नीचे तक फुलवा के तन का एक्स-रे कर डाला; "तू कर लेगी, कभी किया है इस तरह का काम....?"

ठेकेदार ने मुँह में भरे पान को गुलगुलाते हुए कहा,

मोहन ढाल की तरह उसके आगे खड़ा हो गया, जानता था इस तरह के लोगों के बारे में पर उसकी जोरू सुनती ही कहाँ थी किसी की....

"साहब हमारी जोरू है, तीन तक पढ़ी है। हम मना किए थे तेरे बस का नहीं है ये सब पर.... औरत जात कहाँ किसी की सुनती है। आप किसी काम पर लगा दो जल्दी सीख जाएगी।"

"चल ठीक है तू जिम्मेदारी ले रहा है न....!"

और वह दिन था और आज का दिन.... वर्षों बीत गए थे इस अंजान शहर में.... जहाँ कभी कोई इमारत बनती दोनों अपना डेरा-डंडा उठाये पहुँच जाते। फुलवा की बड़ी इच्छा थी कि दोनों बच्चों को पढ़ाये-लिखाए पर इस महंगे शहर में पेट भरने के लिए पैसा कमा लें वही बहुत था। मोहन और फुलवा साइट पर पड़े ईंट को जोड़कर झोपड़ी बना लेते और काली-पीली पन्नी से छत छवा लेते।

फुलवा बड़ी सुघड़ थी। उसका मर्द जब काम से थका-हारा आता। तब वो झट से पिंकिया से लोटा भर पानी और गुड़ भेज देती।

"पिंकिया जब भी कोई बाहर से आए तो उसके लिए गुड़-पानी जरूर रखना।"

"अरे अभी से ये सब घर-गृहस्थी की बातें काहे सिखा रही हो?"

मोहन झुंझला कर कहता

"सोलह की हो गई है इसकी उम्र में तो हमारा ब्याह हो गया था और तुमको अभी बच्ची ही लगती है। गुण कभी बेकार नहीं जाता, अभी से सीखी रहेगी तो ससुराल में काम देगा।"

पिंकिया के लिए स्कूल, कॉपी और पेंसिल जुटाना संभव नहीं था पर फुलवा ने हार नहीं मानी थी। रात को जब शहर रौशनी में नहा जाता तो फुलवा की झोपड़ी भी कुप्पी और चूल्हे के अंगार की रौशनी में दमक उठती। चूल्हे की आग में सिकती रोटियों की गमक से सारी झोपड़ी सौंधी खुशबू से महक उठती। दिन भर ईंटे उठाने से चोटहिल हुए हाथ आटे की लोई को बड़ी कलाकारी से पीट-पीट कर हथेलियों पर बड़ा कर देते। चाँद जैसी गोल-गोल रोटियों को थाली में रखते ही पिंकिया नमक के डिब्बे की ओर भागती और मोहन प्याज को जमीन पर रख अपनी मजबूत हथेलियों से धप्प की तेज आवाज के साथ दो टुकड़े कर देता। कुल जमा सात रोटी ही बन पाती। गिनती की रोटियों के साथ पिंकिया भी सात तक गिनती सीख गई।

फिर आगे.... आगे भी तो गिनती सीखनी थी पर रोटियाँ तो इतनी ही थी। फुलवा ने इसका भी इलाज निकाल लिया था, चूल्हे की लकड़ी को छोटे-छोटे टुकड़ों में तोड़कर वह पिंकिया को आगे की गिनती सिखाने लगी। पिंकिया दिनभर उतरते ईंटों की ट्रक को देखकर खुशी से खिल उठती। एक-दो-तीन-चार.... वो बहुत खुश थी, उसने तीस तक गिनती सीख ली थी। बगल वाले चाचा ने उसकी कितनी तारीफ की थी और कितना आशीर्वाद दिया था....

"बड़ी होकर डॉक्टर बनना।"

और उसके सपनों को मानों पंख लग गए। वो रोज ननकू के साथ डॉक्टर-डॉक्टर खेलने लगी। ननकू भी कोई कम थोड़ी था, वो भी झूठ-मूठ का आँख बन्दकर लेट

जाता। दिदिया है न उसका इलाज करने के लिए.... फुलवा की आँखें भर आती। हाय री तकदीर! ये मासूम ये भी नहीं जानते कि डॉक्टर बनना इतना आसान थोड़ी है। बड़ी पढ़ाई करनी होती है, इतना पैसा लगता है कि जितनी तो उसे गिनती भी नहीं आती।

मोहन और फुलवा पिंकिया और ननकू को छोड़ साइट पर काम पर चले जाते। पिंकिया को आज भी वो दिन याद है। जररर.... की आवाज के साथ मौरंग की ट्रक जमीन पर मौरंग गिराकर आगे बढ़ गई थी। धूल का गुब्बार वातावरण में छा गया था। पिंकिया अपने सुनहरे बालों के साथ अपने छोटे भाई ननकू को कमर पर टिकाये ये नजारा देख रही थी। लाल रिबन बंधी चोटियाँ, घुटने तक की फ्रॉक हाथ में प्लास्टिक की धानी चूड़ियाँ धूप से तपा धूसरित शरीर.... ननकू गोदी से उतरने के लिए मचलने लगा। उसके नए खिलौने जो आ गये थे। दोनों भाई-बहन मौरंग के ढेर की ओर दौड़े। रोज का ही तो काम था उनका... उनकी खेजी निगाहें तेजी से अपने छोटे-छोटे हाथों से मौरंग के ढेर में से अपना खजाना ढूँढ़ने लगती। चिकने पत्थर, छोटे गोल-मटोल पत्थर, सीपियाँ और शंख.... ननकू सबकी नजरें बचाकर अपनी पैंट की जेब में सरका देता। दिदिया उससे हमेशा छीन लेती थी और वो रो कर रह जाता।

पिंकिया अपनी फ्रॉक को एक हाथ से पकड़े दूसरे हाथ से जल्दी-जल्दी खजाने को समेट रही थी। कल ही तो बापू ने बताया था, अब वो झोपड़ी को छोड़कर नई वाली इमारत में रहने चले जायेंगे। कितना खुश थे वो सब.... बारिश के दिनों में कितनी दिक्कत होती थी। पानी झोपड़ी में घुस जाता और लकड़ी भीग जाती, कितनी रात उन्हें भूखे सोना पड़ता था। पिंकिया तो फिर भी बड़ी थी पर ननकू भूख से बिलबिला जाता। फुलवा उन गीली लकड़ियों को न जाने कितने जतन करके जलाने का प्रयास करती पर गीली लकड़ी बस धू-धू करके रह जाती और झोपड़ी धुँए से भर जाती। धुँए से सबकी आँखें जलने लगतीं और आँखों से झर-झर कर आँसू बहने लगते। आँसू तो फुलवा के भी निकल आते पर वो धुँए से नहीं भूख से बिलबिलाते बच्चों के मासूम चेहरों के कारण ही होते थे। अब कम से कम उन्हें भूखे तो नहीं सोना पड़ेगा।

आज उनकी इस झोपड़ी में आखिरी रात थी, मोहन दिन भर का थका हुआ था। बिस्तर पर लेटते ही नींद आ गई थी पर पिंकिया को खुशी के मारे नींद नहीं आ रही थी। बउवा फुलवा का दूध पीकर सो गया था। फुलवा ननकू और पिंकिया को लोरी गाकर सुलाने का प्रयास कर रही थी। झोपड़ी की छत पर पड़ी काली पन्नी एक-आध जगह से फट गई थी। पन्नी के उस पार आसमान में तारे टिमटिमा रहे थे। पिंकिया रोज की तरह उन्हें गिनने का प्रयास कर रही थी।

"ननकू! सो गया क्या....?"

"बोलो दिदिया....!"

"जानते हो कल से हम उस नई वाली बिल्डिंग में रहेंगे और वो जो सुन्दर वाले पत्थर और सीपियाँ हैं न उनसे अपने घर को सजायेंगे।"

पिंकिया ने किलक कर कहा,

"दिदिया! बापू हर बार घर क्यों बदल देते हैं। पहले हम सामने वाली बिल्डिंग में रहते थे फिर हम झोपड़ी में रहने लगे अब फिर नई वाली बिल्डिंग में रहेंगे।"

"हमारे बापू बहुत बड़े आदमी है, हर छः महीने में अपना घर बदल देते हैं, जानते हो ये हमारा सातवाँ घर है।"

ननकू बड़े पशोपेश में था, बड़ा आदमी कौन है... वो जो रोज सफेद चमचमाती लम्बी गाड़ी से अपनी बिल्डिंग को देखने आता है या फिर उसके बापू, जो दूसरों के लिए घर बनाते हैं पर आज तक उनका कोई घर नहीं

हुआ। फुलवा पिंकिया के भ्रम को तोड़ना नहीं चाहती थी, आखिर सपने देखने में हर्ज ही क्या है। तकदीर की लकीरें तो उनकी भी होती हैं जिनके हाथ नहीं होते, सपने तो वो भी देखते हैं जिनकी आँखें नहीं होती। आज भी वो सोचती है काश वह उस नई इमारत में नहीं गए होते तो अम्मा, बापू और ननकू जिंदा होते।

सूरज ढलने को आ गया था। पिंकिया की परछाईं लंबी होती गई उसके दुख की ही तरह.... और उस परछाईं में उसका अस्तित्व ढंक गया। कुछ यात्राएँ अकेले ही तय करनी होती हैं उन यात्राओं को तय करने में कोई हमदम कोई हमकदम नहीं होता। शायद दिदिया के जीवन की यही सच्चाई थी। उसे जीवन में अभी हजारों मीलों की यात्रा करनी थी एक-एक कदम के साथ.... शाम ढलने को आ रही थी, वो जल्दी से लकड़ी वाले के यहाँ पहुँची।

"भइया बीस किलो सूखी लकड़ी तौल देना।"

"कैसे ले जाओगी बिटिया.... ठेला या कोई गाड़ी?"

"हम हैं न...."

दुकानदार उसके हौसले को देखता रह गया।

पिंकिया तराजू को देख रही थी।

"भइया लकड़ी तौल रहे या सोना।"

"बिटिया लकड़ी का भाव बढ़ गया इस बार तो पिछले दाम पर दे दे रहा हूँ पर अगली बार बढ़े हुए दाम पर ही दूँगा।"

"ठीक है अगली की अगली बार देखेंगे।"

उसने बेफिक्री से कहा

पिंकिया ने जल्दी से लकड़ियाँ बटोरीं और लकड़ी को सर पर लाद बउवा को बापू की लुंगी में रख गले से लटका घर के लिए चल पड़ी। वह सोच रही थी उसकी जिन्दगी भी तो तराजू की तरह हो गई है जहाँ सुख और दुःख के साथ उसे सन्तुलन बना कर चलना है। अंधेरा बढ़ने लगा था उसने तेजी से घर की ओर कदम बढ़ा दिए। इसलिए नहीं कि कोई उसका इन्तजार कर रहा होगा बल्कि जहाँ उसे अपने हिस्से का पानी और गुड़ खुद ही लेना था।

सम्पर्क सूत्र :-
लाल बाग कॉलोनी, छोटी बसही,
मिर्जापुर, उत्तर प्रदेश
मो.- 9415479796

एक घरी आधी घरी, आधी हूँ मैं आध।
कबीर संगति साधु की, कटै कोटि अपराध।।

साधु की संगति रहौ, जौ कि भूसी खाठ।
खीर खांड भोजन मिलै, साकति संगिन जाठ।।

जौं तोहिं साध पिरेम की, तौ पाका सेही खेलि।
कांची सरसौं पेलि कै नां खलि भई न तेल।।

-कबीर

संवाद

➲ डॉ. विभा खरे

संध्या उसकी पत्नी थी या गले की घण्टी थी यह वह खुद भी तय नहीं कर पाया था क्योंकि संध्या को अपने जीवन में शामिल करने के लिए वह किसी को जिम्मेदार भी तो ठहरा नहीं सकता था।

आज उसे समझ में आ रहा था कि कभी-कभी सामाजिक प्रतिष्ठा पाने की खातिर उठाया गया कदम कितना भारी, कितना आत्मघाती सिद्ध हो सकता है। आज जब वह संध्या को नर्सिंग होम में छोड़कर आया तो सहसा एक विचार ने उसे झकझोर दिया कि कभी संध्या ने अपने जैसी सन्तान को जन्म दिया तो क्या होगा? कैसे घर में वह एक साथ दो-दो विकलांगों के बीच रहकर उसके साथ जीवन यात्रा तय कर पाएगा?

'विकलांग' शब्द बार-बार उसके कान के पर्दों पर हथौड़े की तरह चोट कर रहा था। भले ही हम अपने आपको कितना ही बड़ा समाज सुधारक मानें लेकिन जब अपना संबंध किसी विकलांग से जुड़ता है तो विकलांगता का बोझ बंजर खेत में जुते बैल की गर्दन पर रखे जूड़े की तरह जानलेवा प्रतीत होता है। जिसे हर हाल में सहन करना ही नियति माना जाता है।

संध्या के साथ उसका विवाह भी एक ऐसा ही बोझ था जो उसे सारी जिन्दगी उठाना था। लेकिन सामाजिक प्रतिष्ठा और दीवार पर मृत जानवरों की खाल की तरह लटके निर्जीव अभिनंदन-पत्र की कीमत पर उसे अपना दर्द खुद अकेले ही पीना पड़ रहा था।

आज जब वह अकेला बैठा तो उसे दीवार पर जड़े अभिनंदन-पत्र मुँह चिढ़ाते नजर आने लगे। उसे ऐसा लगने लगा जैसे अभिनंदन-पत्र का एक-एक शब्द जहर उगलकर उसके कानों में गर्म शीशा उड़ेलकर कह रहा हो-'अविनाश, हार गए ना' झूठी शान और सामाजिक प्रतिष्ठा की खातिर एक गूँगी गुड़िया को ब्याह कर तुम्हें क्या मिला?

"ब्याह?" क्या वह ब्याह था, अविनाश सोचने लगा। समाज का प्रतिष्ठित नागरिक तथा समाजसेवी होने के नाते उसे परिचय सम्मेलन में मुख्य अतिथि के रूप में बुलाया गया था और वहीं संध्या नामक घण्टी उसके गले में बंध गई थी। उस समारोह की एक-एक घटना उसके सामने चलचित्र की तरह गुजरने लगी।

परिचय सम्मेलन के पहले उसने समाज और समाजसेवा पर एक लंबा-चौड़ा भाषण देकर तालियाँ हासिल की थीं। तालियों की गड़गड़ाहट ने उसके जोश में वृद्धि कर दी। इसी जोश-जोश में उसने घोषणा भी कर डाली कि वह दूसरे लोगों की तरह भाषणबाजी में विश्वास नहीं करता, बल्कि कुछ ठोस काम करके दिखाना चाहता है। उसने यह आह्वान भी कर डाला कि यदि समाज को बदलना है तो परम्पराओं को तोड़ना होगा। मुसीबतजदा लोगों को अपनाना होगा। यदि समाज में कोई बेसहारा या

असहाय है तो उसकी सहायता के लिए ढोल पीटने के बजाय खुद को आगे आना होगा। अपने भाषण के आखिर में परिचय सम्मेलन की चर्चा करते हुए वह यह घोषणा कर बैठा यदि आज कोई अपाहिज या असहाय कन्या इस समारोह में आती है तो समाज में परिवर्तन की अलख जगाने के लिए वह स्वयं उसे अपनाकर कथनी और करनी की सार्थकता को सिद्ध करेगा। उसकी इस घोषणा से सारा पंडाल तालियों की गड़गड़ाहट से गूँज उठा। वहाँ मौजूद लोगों की ओर देखते हुए अविनाश जब अपनी कुर्सी पर बैठा तो उसे लगा कि उसने बहुत बड़ा क्रांतिकारी कदम उठाया है। अपनी इस उपलब्धि और पंडाल में गूँजती तालियों की गड़गड़ाहट ने उसके चेहरे पर अमिट आभा बिखेर दी थी।

अविनाश के चेहरे की यह आभा ज्यादा देर नहीं टिक सकी। परिचय सम्मेलन के उद्घोषक ने जब यह घोषणा की कि आज हमारे लिए बड़े गौरव का दिन है, जब अविनाशजी ने हमारे इरादों को एक नई शक्ति प्रदान की है। आज सभी लोगों को यह जानकर प्रसन्नता होगी कि हम अविनाशजी के साहसपूर्ण निर्णय को कार्यरूप में परिणित करने जा रहे हैं। सौभाग्य से इस परिचय सम्मेलन में एक ऐसी कन्या की प्रविष्टि प्राप्त हुई है जो अविनाशजी की कसौटी पर खरी उतरेगी। इतना कहकर उसने मंच पर एक सुंदर-सी कन्या को प्रस्तुत किया। यह संध्या थी। एकबारगी तो अविनाश उसके नव सौन्दर्य को देखकर विस्मृत रह गया। लेकिन जब उद्घोषक ने यह बताया कि संध्या अपना परिचय खुद नहीं दे सकती क्योंकि वह बचपन से ही बोल नहीं सकती है तो यह सुनकर अविनाश का सिर चकराने लगा। वह कुर्सी से खड़ा होना चाहता था कि तालियों की गड़गड़ाहट ने उसके पैरों को जकड़ लिया। कुछ देर पूर्व जो तालियाँ अविनाश को रोमांचित कर रही थीं, वही तालियाँ अब उसके मस्तिष्क पर अनगिनत प्रहार कर रही थीं। उसकी हालत अभिमन्यु की तरह हो गई थी जो अपने ही हाथों एक ऐसे चक्रव्यूह में घिर गया था जिसके अंदर तो उसकी मौत निश्चित थी, लेकिन उसके बाहर निकलना भी मौत से कम नहीं था।

सामाजिक प्रतिष्ठा उस शीशे की तरह होती है जिसे चमकीला बनाए रखने के लिए सहेजकर रखना जरूरी होता है, वरना बदनामी की जरा-सी गर्द इसे मिनटों में धुँधला कर देती है। अविनाश की स्थिति भी उसी शीशे की तरह हो गयी थी। यदि वह अपनी घोषणा से पीछे हटने की बात करता तो बरसों से स्थापित उसकी प्रतिष्ठा धूल में मिल जाती। अब उसके सामने दो ही रास्ते थे। संध्या से विवाह कर सूली पर लटक जाए या विवाह करने से इंकार कर सामाजिक मौत का अपने हाथों वरण कर ले। अविनाश, जिसने अपनी मेहनत से समाज में सम्मानजनक रुतबा हासिल किया था, सामाजिक मौत नहीं मरना चाहता था। लिहाजा उसे अपनी प्रतिष्ठा की खातिर संध्या को अपनाना पड़ा। वैसे तो संध्या में कोई खामी नहीं थी। घर-गृहस्थी के कामकाज में भी वह बेजोड़ थी। लेकिन अविनाश को इन सब बातों से कोई वास्ता नहीं था। क्योंकि उसके घर में नौकरों की कोई कमी नहीं थी। उसे संध्या के पढ़े-लिखे होने से भी कोई लाभ नहीं था क्योंकि उसे संध्या से नौकरी तो कराना नहीं थी। इसलिए तमाम खूबियों के बावजूद संध्या उसे एक खूबसूरत गुड़िया से ज्यादा कुछ नहीं लगती, जिससे बातें तो की जा सकती थीं, लेकिन किसी तरह के प्रत्युत्तर की आशा करना बेकार था।

संध्या ने आते ही अविनाश के घर की काया ही पलट दी। जो कमरे पहले कबाड़ घर की तरह अस्त-व्यस्त पड़े रहते थे, सलीके से सज गए। वह सुबह-शाम अविनाश का पूरा ख्याल रखती थी। उसकी पसंद और नापसंद के प्रति सदैव सतर्क रहती। फिर भी उसे अविनाश का रूखापन ही सहना पड़ता था। शादी के बाद अविनाश का चिड़चिड़ापन बढ़ने लगा। जब वह किसी पार्टी में जाता और लोग इसके अकेले आने का जिक्र करते तो यही लगता सारे के सारे लोग मिलकर उसकी हँसी उड़ा रहे हैं। वह कर भी क्या सकता था?

एक-दो बार वह संध्या को लेकर पार्टी में गया भी था, लेकिन इससे उसकी परेशानी कम होने के बजाय बढ़ ही गई थी। जो लोग पहले अविनाश के साहसिक कदम की प्रशंसा करते थे वे ही अब उसके प्रति सहानुभूति दिखाते प्रतीत होते।

ऐसा नहीं था कि उसके सीने में दिल नहीं था। संध्या के सलोने रूप और उसकी सेवा ने कई बार उसे आन्दोलित किया था। जब वह निंद्रामग्न संध्या को देखता तो उस पर प्यार उमड़ पड़ता था। कई बार उसके दिल से आवाज उठती-'इस बेचारी का क्या कसूर' लेकिन संध्या का गूँगापन उसके दिल की बात को जुबान तक न लाने देता था। कई बार तो उसे ऐसा लगता कि संध्या के साथ रहते-रहते वह खुद भी गूँगा हो गया है। ऐसी अवस्था में वह जोर से चीख पड़ता था। शायद यह एहसास दिलाने के लिए कि वह अभी तक ठीक है।

एकाएक टेलीफोन की घण्टी ने उसके विचारों के क्रम पर विराम लगा दिया। फोन नर्सिंग होम से आया था। खबर मिली कि संध्या ने अभी-अभी उसके बच्चे को जन्म दिया था। फोन रखकर अविनाश नर्सिंग होम की ओर रवाना हुआ। सारे रास्ते उसे यही चिन्ता खाए जा रही थी कि कहीं उसकी संतान भी संध्या की तरह गूँगी हुई तो क्या होगा?

नर्सिंग होम पहुँचकर वह सीधा प्राइवेट रूम की ओर लपका, जहाँ वह संध्या को छोड़कर गया था। दरवाजे पर ही नर्स ने उसे रोक कर कहा-'बधाई हो सर, चाँद-सी बिटिया आयी है'। नर्स के मुँह से लड़की पैदा होने की बात सुनते ही उसके चारों ओर अंधकार छाने लगा। कदम डगमगाने लगे, रह-रहकर उसके कानों में एक ही आवाज गूँज रही थी-संध्या, मैं नहीं जानता था कि तुम अपने नाम के अनुरूप मेरी जिन्दगी में भी अंधकार फैलाने आओगी'।

अविनाश के कदमों की आहट सुनकर संध्या ने आँखें खोली। उसकी आँखें नम थीं। उसकी जुबान पर लगा प्राकृतिक ताला उसके भावों को प्रकट करने में बाधक बना हुआ था। शायद इसीलिए वह अपनी नम आँखों से अविनाश को कुछ कहना चाहती थी, लेकिन अविनाश की आँखों के सामने अंधेरा छाया था। इस कारण वह संध्या की आँखों की भाषा न पढ़ सका।

उसने एक नजर संध्या पर डाली फिर उचटती-सी नजर से उस नन्हीं जान को देखा जो न तो संध्या की जुबान को पढ़ सकती थी और न ही अविनाश के दिल के दर्द को ही समझ सकती थी। वह चुपचाप भारी मन से लौटने ही वाला था कि पीछे से आती एक नन्हीं-सी रुलाई ने उसका रास्ता रोक दिया। संध्या और उसके बीच पहली बार संवाद स्थापित करने वाली इस आवाज को सुनकर वह तड़प उठा। पलटकर देखा, उसकी नन्हीं-सी बिटिया रो रही थी, उसे लगा जैसे संध्या उसे पुकार रही हो। दौड़कर उसने बच्ची को उठाकर सीने से लगा लिया और बेतहाशा चूमने लगा।

अचानक संध्या को अपनी हथेली पर गर्माहट महसूस हुई। उसने देखा उसकी हथेली पर दो बूँदें चमक रही थीं जो अविनाश की आँखों से गिरी थीं। उसने अपनी आँखों को मूँद लिया और महसूस किया कि अविनाश की आँखों से बहे आँसुओं ने उसके मन का सारा कलुष धो डाला है उसने अपनी हथेली से अविनाश के आँसू पोंछना चाहे लेकिन अविनाश ने बीच में ही उसकी हथेलियों को थाम लिया। 'कौन कहता है कि तुम बोल नहीं सकती। देखो, इस नन्हीं-सी बिटिया की आवाज में मुझे तुम्हारी आवाज का एहसास हो रहा है' कहते हुए उसने संध्या की हथेली को धीरे से दबाकर उस नन्हीं-सी गुड़िया की ओर इशारा किया जो रो-रोकर दोनों की ओर टुकर-टुकर देख रही थी।

पता- जी-9 सूर्यपुरम्, नन्दनपुरा
झाँसी-284003 (उ.प्र.)
मो0- 9415055655

एनाटॉमी-प्रोफेसर

➲ डॉ. चमन टी माहेश्वरी

एनाटॉमी, मतलब शरीर रचना शास्त्र। डॉक्टर बनने का पहला कदम भी कह सकते हैं जिसमें चिकित्सक बनने के लिए मृत व्यक्ति का चीड़फाड़ करके सीखना। डॉ. निसर्ग इसी विषय में प्रोफेसर थे। और उनकी पत्नी लावण्या को यह कभी भी पसंद नहीं था।

"विनीत, मेरा किसी भी क्लीनिकल सब्जेक्ट में पीजी में चयन नहीं हुआ। मैं फिर से अगले साल की तैयारी कर रहा हूँ," रिजल्ट आने पर उदासी से निसर्ग बोला।

"यार एक काम कर, अभी प्री-पीजी टेस्ट के लिए साल पूरा बाकी पड़ा है। एनाटॉमी में ट्यूटर के लिए जगह खाली पड़ी है, उसे ज्वाइन कर ले। वैसे भी एनाटॉमी में ट्यूटर के लिए इतना खास काम होता नहीं है। और सैलरी चालू हो जाएगी," विनीत ने बीच का रास्ता बताया क्योंकि राघव मध्यमवर्गीय परिवार से था।

"हाँ यह बात भी सही है घर से कब तक पैसे मंगवाऊँगा," राघव को विनीत की बात सही लगी।

ट्यूटर की नौकरी मिल गयी क्योंकि कोई भी नॉन-क्लीनिकल ब्रांच में नहीं आता है। ग्रामीण डॉक्टर जैसी मासिक सैलेरी भी और सरकार के दूसरे लाभ भी। ऊपर से क्वार्टर भी कॉलेज कैंपस में मिल गया।

दो महीने बाद एक दिन विभागाध्यक्ष ने बुलाया, "निसर्ग इस बार भी पोस्ट ग्रेज्युएट एनाटॉमी सीट खाली रही। कोई भी नॉन-क्लीनिकल पीजी करना नहीं चाहता," उन्होंने अफसोस के साथ आगे कहा, "यदि तुम्हारी इच्छा है तो मैं विशेष तौर पर तुम्हारे ट्यूटरशिप के साथ-साथ पोस्ट ग्रेज्युएशन का भी आदेश निकाल दूँ ताकि कम से कम कुछ साल बाद कॉलेज को एक आध प्रोफेसर मिल सके," विभागाध्यक्ष डॉ. परिहार सर ने नॉन क्लीनिकल एनाटॉमी की हालत पर अफसोस करते हुए निसर्ग को बहुत अच्छी ऑफर दी।

"जी सर मुझे खुशी होगी," वह प्रपोजल मिलने से बहुत खुश तो नहीं हुआ, पर संतुष्ट था कि कम से कम नौकरी के साथ-साथ डिग्री भी हो जाएगी।"

"बेटा, सेठ धर्मचंद की लड़की का रिश्ता आया है। रविवार को तुम घर पर आ जाओ," एक दिन पापा का कॉलेज में फोन आया।

"पर पापा मैं अभी आगे पढ़ाई की तैयारी कर रहा हूँ अभी मैं शादी नहीं करना चाहता हूँ।"

"तो कौन-सी कल ही शादी कर रहे हैं," पापा इस बार झुंझलाकर बोले। झुंझलाहट से महसूस हुआ कि शायद बहुत ही पैसे की दृष्टि से अच्छा घर आया हुआ होगा।

"तू खाली लड़की देख तो ले," माँ ने समझाया।

"ठीक है माँ। वैसे भी मैं रविवार को घर आ ही

रहा हूँ," उसे माँ की बात सही लगी कि लड़की देखने में हर्ज क्या हैं। पता तो चले समाज में लड़कियाँ कैसी व किस तरह की है। और पता तो चले लड़की देखने के नीति-नियम। उसने शादी करने की दृष्टि से अभी तक कोई भी लड़की नहीं देखी।

सेठ धर्मचंद की लड़की मालिनी को देखा तो आँखें ही नहीं राघव का मन भी खुश हो गया। कॉलेज में प्रवेश के समय जब सीनियर्स के डर से रैगिंग में जब उसने कॉलेज की लड़कियों की जो ब्यूटी लिस्ट बनायी थी उसमें लावण्या सबसे ज्यादा खूबसूरत थी, पर यह मालिनी तो उससे भी दुगनी सुंदर है तो कहना गलत ना होगा। एकदम गोरा धवल रंग, लंबे काले घने बाल, हल्की नीली गहरी समुद्र जैसी आँखें व गुलाब की पंखुड़ी जैसे रसभरे होंठ और हँसती तब गालों में डिंपल, और साढ़े पाँच फीट ऊँचाई हीरोइन जैसी। ऊपर से कितनी मीठी मदमस्त आवाज, वह तो उसे देखते ही दीवाना हो गया।

निसर्ग का मुँह खुला का खुला रह गया कि भगवान ने उसकी किस्मत कितनी शान्ति से लिखी होगी, उसे डॉक्टर की डिग्री के साथ-साथ इतनी खूबसूरत कन्या भी उसके किस्मत में लिखी। हालांकि इसका सबसे बड़ा कारण उसका डॉक्टर होना ही था। वह सोच रहा था कि इतनी खूबसूरत मदहोश करने वाली अप्सरा उसे डॉक्टर की डिग्री के कारण ही मिली। क्योंकि खुद निसर्ग सामान्य सांवला रंग वाला-सा लड़का था।

उसकी सोच गलत भी नहीं थी, सेठ धर्मचंद उसके पिता के संस्कारी खानदान के साथ ही उसके डॉक्टर के उपसर्ग के कारण ही अपनी खूबसूरत हीरोइन जैसी बेटी दे रहे हैं। क्योंकि उनकी अनुभवी सोच थी कि ऐसी खूबसूरत अप्सरा का ध्यान गुलाम भारत में राजकुमार और स्वतंत्र भारत में ध्यान डॉक्टर ही रख सकता है।

"क्या सोच रहे हैं आप?" मंदिर की घण्टियों जैसी आवाज ने उसकी तंद्रा भंग की।

"यही कि कल मैं माँ को मना करता, यहाँ आने के लिए, तो मैं अपने आपको कभी भी माफ नहीं करता," वह मासूमियत से बोला तो वह शर्मा गयी प्रशंसा करने की ऐसी अदा पर।

दोनों को आगे को ज्यादा बात करने की जरूरत भी नहीं थी मालिनी की खूबसूरती व निसर्ग की डॉक्टर की उपाधि दोनों ही बोल रही थी।

समाज में लड़कियाँ डॉक्टर को कुबेर व कामदेव का रूप समझते हैं कि उनका हॉस्पिटल और घर पर चारों ओर दर्दी ही दर्दी होंगे।

एक पेंच फंसा, शादी इसी साल में दो-तीन महीने बाद ही होगी क्योंकि सेठ धर्मचंद अपनी बड़ी बेटी के साथ-साथ छोटी बेटी की शादी करना चाहते थे क्योंकि मालिनी की माता की तबियत अच्छी नहीं रहती थी।

"क्या! निसर्ग स्तब्ध हो गया यह सुनकर। यदि वह लड़की को देखने से पहले इसकी पिता की शर्त सुनता तो शायद लड़की देखने से ही मना कर देता। परी व हिन्दी अभिनेत्री जैसी खूबसूरत लड़की को छोड़ देने जैसी मूर्खता, महामूर्खता होगी, उसके मन ने ही नहीं दिमाग ने भी कहा। वैसे भी जिन्दगी का उद्देश्य अच्छी नौकरी व सुंदर पत्नी ही होता है। वह तो दोनों निसर्ग की झोली में भगवान ने खुद ही ऊपर से डाल दी। माता-पिता को इतने धनी व मान सम्मान वाले संबंधी मिल रहे थे वे तो फूले ही नहीं समा रहे थे।

चार महीने बाद धूमधाम से निसर्ग की शादी मालिनी से एक पहाड़ी रिसोर्ट में हो गयी। उसके बहुत सारे दोस्त शादी में आए थे जिसमें लड़कियाँ भी थीं जैसे मालिनी को देखकर निसर्ग अचरज में था वैसे इसके दोस्त आश्चर्य में पड़ गए।

सच कहें तो निसर्ग की जिंदगी की तलाश यहीं खत्म हो गई। मालिनी भी बहुत खुश थी डॉक्टर से शादी

करने के लिए, क्योंकि वह समझती थी कि डॉक्टर से अच्छा पति किसी लड़की के लिए नहीं हो सकता है क्योंकि डॉक्टर के पास खूब सारा मान-सम्मान और दिन भर पेशेंट के रूप में धन मिलता रहता है और वह खुद मुश्किल से स्कूल पास कर सकी थी।

निसर्ग का सरकारी क्वार्टर, फर्नीचर व जरूरी भौतिक साधनों से भर चुका था साथ में ससुर ने लग्जरी कार भी दी थी।

सबको निसर्ग के किस्मत से जलन हो रही थी। निसर्ग अपनी किस्मत से ज्यादा धन्यवाद अपनी डॉक्टर डिग्री को दे रहा था।

अब निसर्ग स्वनिर्भर था और क्लीनिकल ब्रांच के लिए प्री-पीजी की तैयारी भी कर रहा था। कॉलेज की नौकरी, खूबसूरत बीबी और सामाजिक-पारिवारिक जिंदगी की जवाबदारियों के बीच में इसका चयन इस बार भी क्लीनिकल मेडिकल शाखा में नहीं हो पाया।

निसर्ग जाहिरा तौर पर इसका कारण असमय शादी को बता रहा था पर वह अपनी जिंदगी से संतुष्ट हो चुका था। एवरेस्ट चोटी पर पहुँचने के बाद किसी भी पर्वतारोही को और चोटी पर चढ़ने की ना इच्छा होती ना जरूरत होती है। पर घरवालों व पत्नी को कह दिया कि वह अगले साल फिर कोशिश करेगा, अच्छी-सी क्लीनिकल ब्रांच के लिए। घर वालों व सबको विश्वास था क्योंकि वह अपने शहर में 12वीं की परीक्षा में प्रथम आया था।

दूसरे वर्ष वह पिता बन चुका था। जिस तरह चाकू की धार काटते-काटते नर्म पड़ जाती है वैसे निसर्ग के साथ हुआ वह लगातार तीसरे वर्ष भी क्वालीफाई नहीं कर पाया। पर इससे उसको कोई फर्क नहीं पड़ा क्योंकि एक तो वह अपनी वर्तमान जिंदगी से संतुष्ट था और उसके अब एनाटॉमी में दो साल पढ़ाई के पूरे हो चुके थे। मतलब एक ही साल बाकी था उसका पढ़ाई पूरी होने का और उसके बाद वह प्रोफेसर बन जाएगा।

पर मालिनी बड़ी निराश थी क्योंकि इसने ऐसे डॉक्टर के रूप में पति की कल्पना की थी कि उसका पति पूरे दिन पेशेंट देखेगा और बहुत सारे ऑपरेशन कर रहा होगा और खूब सारा पैसा कमा रहा होगा, रात को इमरजेंसी में बार-बार जाना होगा। ऐसा कुछ नहीं था निसर्ग की मेडिकल जिंदगी में। वह तो रविवार को व छुट्टी के दिन घर पर होता है।

वह दो साल बाद निराश हो चुकी थी। उसकी डिप्रेशन जैसी हालत थी जैसा कि उस मेडिकल विद्यार्थियों की होती जिसे अपनी मनपसंद क्लीनिकल लाइन नहीं मिली। उसे अब अपने रिश्तेदारों व सहेलियों को यह कहते शर्म आती थी कि उसक पति पेशेंट देखने वाला डॉक्टर नहीं है वह तो एनाटॉमी का प्रोफेसर है और मरे हुए मुर्दे चीरकर नए बच्चों को डॉक्टर बनाना सिखाता है।

मालिनी की किच-किच के बीच में निसर्ग की पढ़ाई अब पूरी हो चुकी थी। एक दिन फिर विभागाध्यक्ष ने उसे फिर बुलाया, उसे असिस्टेंट प्रोफेसर की नियुक्ति उसी दिन दे दी क्योंकि एनाटॉमी के प्रोफेसर मिलते नहीं हैं। अब वह सरकारी अधिकारी की जगह, प्रोफेसर हो गया था। साथ में दो कमरे के क्वार्टर की जगह उसे सरकारी बंगला मिला।

प्रोफेसर शब्द से मालिनी को इतनी नफरत थी जितना उसे डॉक्टर शब्द से प्यार। उसने निसर्ग को वापिस प्री-पीजी देने को बहुत समझाया। पर हाँ हूँ करके अपनी असमर्थता व संतुष्टि दोनों ही बता दी।

साथ में हकीकत में खुद उसको पढ़ाने का मजा आने लगा था। नए-नए विद्यार्थी जो छोटे-छोटे कस्बों व गाँवों से आते थे, उनका मानसिक स्तर बहुत ऊँचा था पर वह बड़े-शहरी जीवन में हताशा अनुभव करते थे। एक पैसे के कारण और दूसरी अपने हिन्दी मीडियम के कारण।

ऊपर से रैगिंग के खौफ में जीते, ऐसे नए बच्चों के लिए डॉक्टर निसर्ग ढाल और तलवार दोनों ही बनते थे।

प्रोफेसर बनने के बाद उसमें संजीदगी आ गई थी। विद्यार्थियों के बीच में उसका बहुत अच्छा मान-सम्मान था। मेडिकल कॉलेज की पढ़ाई में प्रथम वर्ष में आने वाले बच्चे ज्यादातर छोटे शहरों-गाँवों से सरकारी स्कूल में, हिन्दी माध्यम से पढ़ाई होती थी। उन्हें अंग्रेजी माध्यम में पढ़ाने के कारण शुरुआत में बहुत ही तकलीफ होती थी। यह बात डॉक्टर निसर्ग अच्छी तरह जानते थे। क्योंकि वह भी छोटे कस्बे के आए थे। इसीलिए पढ़ाते समय बीच-बीच में हिन्दी बोल कर बच्चों को समझाते थे। यह बात ऐसे बच्चों को बहुत ही अच्छी लगती थी। इस कारण वे विद्यार्थियों में बहुत ही प्रिय थे। कई विद्यार्थी उन्हें गुरुजी कहकर संबोधित करते थे। वे मजाक में जवाब देते, "गुरुजी मत कहो बुढ़ापे का एहसास होता है।"

एनाटॉमी की पढ़ाई प्रथम वर्ष में होती थी उसके बाद विद्यार्थी आगे बढ़ जाते थे। एनाटॉमी विषय हकीकत में बहुत ही प्रैक्टिकल विषय होता है। मेडिकल का भले ही यह प्रथम विषय हो पर सर्जन-विशेषज्ञों के लिए यह जिंदगी भर का विषय होता है। अक्सर प्रसिद्ध सर्जन के लिए उनके साथी यह कहते हैं कि उसकी एनाटॉमी बहुत ही अच्छी है।

आम आदमी में लोकप्रिय शव-विच्छेदन की प्रक्रिया इसी साल होती है। मृत शरीर के एक-एक अंग को माइक्रो विच्छेदन करके किस वेसल्स की कहाँ-कहाँ सप्लाई होती है वह इस विषय में समझाते हैं। कौन-सी तंत्रिका किस को नियंत्रित करती है यह सब इसी एनाटॉमी से ही हम सीखते हैं।

"एनाटॉमी का क्लीनिकली क्या महत्त्व है," राम सिंह ने पूछा-"बेटा! जिसकी एनाटॉमी की नॉलेज अच्छी तरह नहीं होगा तो वह कभी भी जिंदगी में अच्छा सर्जन नहीं बन सकता। क्योंकि जिस तरह एक नाविक को समुद्र का नक्शा अच्छी तरह पता होना चाहिए वैसे ही एक सर्जन को कौन-सी चीज कहाँ है? जब वह जिस जगह ऑपरेशन करने के लिए चीरा लगाता है उसके बारे में ही नहीं बल्कि उसके नीचे उसके आसपास कौन-सी तंत्रिका जाती है कौन-सी वैसल्स जाती है कौन-सी माँसपेशी है, यह पता होना ही चाहिए। यह सब उसके दिमाग में उस समय होना चाहिए। तो ही वह ब्लड-लेस और सफल सर्जरी कर सकता है और यह सब हम एनाटॉमी से सैद्धान्तिक व व्यावहारिक रूप से सीख सकते हैं।

कुल मिलाकर अच्छा व सफल सर्जन वही बनता है जिसका एनाटॉमी का ज्ञान ज्यादा होता है।"

अस्थी पर वह चॉक के रंगीन निशान बनाकर कौन-सी चीज इस हड्डी से जुड़ती है कौन-सी चीज निकलती है वह एक-एक विद्यार्थियों को समझाते हुए एनाटॉमी की हर क्षेत्र में उन्हें महारत हासिल हो गई, यहाँ तक कि उनके पास सर्जरी कर रहे रेजिडेंट डॉक्टर भी एनाटॉमी सीखने कई बार आते थे। उन्होंने अपने विद्यार्थियों को कभी भी उनसे क्लास के अलावा भी पूछने की छूट दे रखी थी।

कई विद्यार्थी एनाटॉमी में पास होने के बाद भी उनसे मिलते रहते थे और उनकी राय, सलाह व आशीर्वाद लेते थे।

कुल मिलाकर वे आर्थिक व अकादमिक तरीके से खुश व संतुष्ट थे अपनी पत्नी मालिनी के विपरीत। मालिनी जब पास के बंगलों में रह रहे मेडिसिन व बच्चों के डॉक्टरों को वहाँ पर रोज घर पर पेशेंट व मेडिकल रिप्रेजेंटेटिव को देखती थी तो और उनकी पत्नियों के मुँह से अपने पति की व्यस्तता के बारे में सुनती थी तब उसका सुंदर चेहरा गुस्से से लाल हो जाता था और नथुने फूल जाते थे।

एक बार निसर्ग का अपने साले, जो अहमदाबाद में रहते थे, के बंगले के मुहूर्त में अहमदाबाद आना हुआ।

वापिस जाते हुए उनकी कार का जोरदार एक्सीडेंट हुआ और उन्हें सिर में गंभीर इंजरी हुई और वे बेहोश हो गए। उन्हें तत्काल हॉस्पिटल लाया गया उन्हें आईसीयू में रखा गया।

"इन्हें डॉक्टर चांडक जैसे न्यूरो-सर्जन की जरूरत है। पूरे शहर में एक वही मस्तिष्क का इस तरह का ऑपरेशन कर सकते हैं," मस्तिष्क की एमआरआई रिपोर्ट देखते हुए डॉ. राठी ने उनके साले और पत्नी को कहा।

"तो डॉक्टर साहब आप उन्हें बुलाइए ना," मालिनी ने बदहवास से कहा।

"मैडम, डॉक्टर चांडक सर आज ही फ्लाइट में जर्मनी जा रहे हैं, बहुत जरूरी काम से," डॉ. राठी अफसोसजनक स्वर में बोले।

"ओह नो," उनकी पत्नी जैसे बेहोश हो गई।

"सर, प्लीज आप एक बार उनको व्हाट्सएप से रिपोर्ट भेज कर बात तो कीजिए। शायद वे कोई रास्ता बता सकें," डॉक्टर निसर्ग के साले ने डॉ. राठी से रिक्वेस्ट की।

मरीज खुद डॉक्टर है और मेडिकल कॉलेज के प्रोफेसर हैं। इसीलिए डॉक्टर होने के नाते, डॉक्टर की मदद करने की उनकी नैतिक जिम्मेदारी बनती है, यह सोचकर डॉ. राठी ने डॉ. चांडक को फोन किया।

डॉ. चांडक इस समय अपने जाने की पैकिंग कर रहे थे, इस समय उन्हें फोन आना अच्छा नहीं लगा। पर डॉक्टर हमेशा डॉक्टर ही होता है।

"सॉरी सर, मरीज खुद ही डॉक्टर और मेडिकल कॉलेज के प्रोफेसर हैं," डॉ. राठी ने मरीज की पूरी कंडीशन बतायी और व्हाट्सएप पर रिपोर्ट भेजी। दो मिनट बाद वापस डॉ. चांडक का फोन आया, "आप उनके चेहरा का फोटो भेजिए प्लीज," डॉ. चांडक को इस तरह का फोटो भेजने का कहना अजीब लगा, पर उन्होंने उसी समय फोटो भेजा।

"ओह माय गॉड," फोटो देखकर डॉ. चांडक ने फोन पर कहा।

"डॉ. राठी, आप फटाफट ऑपरेशन की तैयारी करो। मैं तुरंत हॉस्पिटल पहुँचता हूँ," उन्होंने तुरंत फोन काट दिया। यह सुनकर डॉ. राठी अचंभित और असमंजस में पड़ गए। डॉ. चांडक के जल्दी फोन काटने पर मालिनी जोरदार निराश हुई।

"डॉ. चांडक आ रहे हैं। उन्होंने ऑपरेशन की तैयारी करने के लिए कहा है," डॉ. राठी ने पागलों जैसे बोला।

"क्या!" मालिनी खुश हुई, अब उन्हें अपने पति की बचने की आशा बंधी।

"सर अभी कितनी फीस जमा कराऊं?" उनके साले ने पूछा।

"डॉ. चांडक की फीस दस लाख से स्टार्ट होती है। आप ऐसा करें अभी पाँच लाख जमा करा दीजिए।"

"ओके," उनके साले ने क्रेडिट कार्ड से पाँच लाख रुपये तुरंत काउंटर पर जमा करा दिया।

बीस मिनट में डॉ. चांडक आए। उनके साथ उनके दो असिस्टेंट थे और काफी सारा सामान दिमाग की सर्जरी करने का था। वह बिना किसी को जवाब दिए धड़ल्ले से सर्जरी कक्ष में घुसे। तब तक मरीज को ऑपरेशन की टेबल पर लिया जा चुका था। डॉ. राठी ने उन्हें ब्रीफ किया। उन्होंने सारी रिपोर्ट देखी। एक बार पेशेंट को अच्छी तरह से देखा। उन्होंने मन ही मन तय किया कि कौन-सा व कैसे ऑपरेशन करना है फिर अपनी टीम को ऑपरेशन-प्रोटोकॉल बोला।

डॉ. चांडक की सर्जरी के दौरान बॉडी लैंग्वेज गजब की होती है। वे बहुत कम बोलते हैं और बिना बोले असिस्टेंट को आँखों से बता देते हैं कि उन्हें कौन-सा इन्ट्रूमेंट चाहिए या क्या करना है। ऑपरेशन के दौरान

उनके हाथ गजब के व लय के साथ चलते हैं जैसे एक चित्रकार चित्र बना रहा है।

पूरी तीन घंटे लगे मस्तिष्क के ऑपरेशन करने में। इतनी लंबी सर्जरी के कारण सब लोग थक चुके थे। पर डॉ. चांडक के चेहरे पर पसीना तक नहीं था।

"सर क्लोजर स्टिच मैं ले लेता हूँ," राठी ने कहा क्योंकि वह खुद भी एक सर्जन हैं। सामान्यतयः ऑपरेशन, मुख्य सर्जन के करने के बाद में टांके लेने व अन्य कार्य असिस्टेंट डॉक्टर करता है।

"आज नहीं डॉ. राठी," उन्होंने मुस्कुराते हुए कहा।

डॉ. राठी के चार घंटे से उनके दिमाग में यही चल रहा था कि डॉ. चांडक जैसे व्यक्ति जिनको अभी जर्मनी की फ्लाइट पकड़नी है, वे ऑपरेशन के लिए क्यों आए?

ऑपरेशन के बाद डॉ. निसर्ग को पास के रिकवरी रूम में शिफ्ट किया, अभी तक उनके ऊपर एनेस्थेसिया का असर था। होश आने में तीन-चार घंटे लग जाएंगे।

डॉक्टर चांडक कॉफी पीने के बाद पेपर पर ट्रीटमेंट लिख रहे थे, "डॉ. राठी, इनकी सेवा में हॉस्पिटल का सबसे अनुभवी व काबिल नर्सिंग स्टाफ 24 घंटे लगाइए और होश में आने के बाद जो वीआईपी सुइट मैंने मंत्री जी के लिए रिजर्व रखा था, वहीं इन्हें शिफ्ट कर दीजिए। मैं रात दो बजे के बाद वापस आ रहा हूँ इन्हें देखने के लिए, तब तक होश आ जाएगा," डॉ. चांडक ने कहा तो डॉ. राठी आखिर बोल पड़े, "सर डॉ. निसर्ग कौन हैं?"

तब सिस्टर आयी, "सर यह डॉक्टर निसर्ग की पत्नी मालिनी जी हैं।" यह सुनकर डॉक्टर चांडक अपनी कुर्सी से तुरंत उठे और उनके चरण छूकर बोले, "प्रणाम गुरु माता"

डॉक्टर चांडक हावर्ड रिटर्न व्यक्ति जो अमेरिकन स्टाइल की इंग्लिश बोलते हैं, उनके मुँह से गुरु माता शब्द सुनकर सब आश्चर्य से उन्हें देख रहे थे।

"डॉ. साहब आप कौन हैं?" उन्होंने भी आश्चर्य व धन्यवाद भरी आँखों से पूछा।

"पहले मैं आपको बता दूँ कि डॉ. निसर्ग सर, मतलब मेरे गुरुजी एकदम ठीक हैं। उनका ऑपरेशन समय पर और सफल हो गया। 4 घंटे में होश आ जाएगा, और मैं कौन हूँ? मैं मेरे गुरु मतलब डॉ. निसर्ग सर का एनोटॉमी का विद्यार्थी हूँ। सर ने मेरा और दूसरे विद्यार्थियों का बहुत ध्यान रखा जो मेरे जैसे ग्रामीण परिवेश से आए थे। सर ने हमारा हमेशा आत्मविश्वास बढ़ाया उन्होंने हमें एनाटॉमी इतनी अच्छी तरह पढ़ाई कि आज उसी एनाटॉमी पढ़ाने के कारण मैं एक कामयाब न्यूरो सर्जन हूँ," डॉ. चांडक कृतज्ञता से बोले।

"जब डॉक्टर राठी ने बोला कि मरीज डॉ. प्रोफेसर हैं और डॉ. निसर्ग हैं, वो मेरे दिमाग में एक ही शब्द है, वह हैं मेरे गुरु जी। मैंने उन्हें तुरंत इसीलिए उन्हें फोटो भेजने का कहा।"

"बेटा आपको अर्जेंट व जरूरी काम से जर्मनी जाना था।"

"गुरुजी की जिंदगी से बड़ा जरूरी काम मेरे लिए क्या हो सकता है। उन्होंने तो हमें कॉलेज में पढ़ने के दौरान सिर्फ दिया ही दिया था। आज मैं करोड़ों रुपए कमाता हूँ, छोटे से गाँव में पैदा हुआ, आज मैं पूरी दुनिया में घूम रहा हूँ गुरु जी की शिक्षा का ही योगदान है। मैं तो खुश किस्मत हूँ कि मैं गुरु दक्षिणा दे सका। मैं अभी यहीं हूँ और रोज उन्हें देखने के लिए आऊँगा। यह मेरा नंबर है आप मुझे कभी भी सीधा फोन कर सकती हैं," विजिटिंग कार्ड देते हुए कहा।

"आप की कितनी फीस हुई। मैं काउंटर पर जमा

कराता हूँ।"

"डॉ. निसर्ग सर, मेरे पिता समान हैं क्या कोई बेटा अपने पिता से फीस लेगा?" मालिनी देखती ही रह गयी डॉ. चांडक की बातें सुनकर। क्या एक एनाटॉमी प्रोफेसर से ज्यादा कोई यश व सम्मान कमा सकता है!! जब शहर का सबसे बड़ा डॉक्टर यह बोल रहा है कि आज मैं जो भी हूँ वह सब गुरु जी के कारण है, गुरुजी की एनाटॉमी शिक्षण के कारण है।

आज मालिनी को अपने आप पर दुख व अफसोस हो रहा था कि क्यों वह जिंदगी भर अपने पति के एनाटॉमी प्रोफेसर होने के कारण हीनता की शिकार हुई।

ई-1, 604 सत्यमेव कॉलोनी
गायत्री नगर, गौत्री
बडोदरा, गुजरात-390021
मो. - 9426532439

मुकुट पर वारी जाऊँ नागर नन्दा, बाल मुकुन्दा।
सब देवन में आब बड़े हों ज्यों तीरथ बिच गंगा।
सहस्र गोप्याँ बिच आप बिराजो, ज्यों तारन बिच चँदा
सीस चन्दन री खेर बिराजे बिच केसर री बिन्दी
मीराँ कहे प्रभु गिरधर नागर, आप ठाकुर हह बान्दी।।

सखी म्हारो कानूड़ो कलेजे री कोर।
मोर मुकुट पीताम्बर सोहे, कुण्डल री झकझोर।
वृन्दावन री कुंज गली में नाचत नन्द किशोर।
मीराँ रा प्रभु गिरधर नागर, चरण कमल चित चोर।।

-मीराँबाई

रास्ते

➲ डॉ. शोभा अग्रवाल 'चिलबिल'

दीपिका ने अभिनव को फोन किया-'अभिनव! मेरे और तुम्हारे रास्ते अलग-अलग हैं।'

'क्यों?' अभिनव ने कुछ गुस्से से कहा।

'तुम खुद सोचो। आई.आई.टी. में मेरे इंजीनियरिंग में चयन के बाद तुम्हें मेरे में अवगुण ही अवगुण दिखाई पड़ते हैं।' दीपिका ने कहा।

अभिनव कुछ गुस्से से बोला-'तुम्हारा दिमाग खराब है। तुम अपने को पता नहीं क्या समझने लगी हो।'

दीपिका ने कहा-'अब यही उदाहरण ले लो। मेरा फोन तुम नहीं उठाते हो। आज जब मैंने दूसरे के फोन से फोन किया, तब तुमने उठाया। ऐसा पहले तो कभी नहीं होता था। कभी तुम फोन नहीं भी उठा पाए तो मिस्ड कॉल देख कर बाद में फोन कर लेते थे।'

अब अभिनव कुछ बोल नहीं पाया।

इस वार्तालाप के बाद दीपिका फफक कर रो पड़ी। दीपिका की माँ ज्योति जी भी रोने लगीं। माँ ज्योति जी ने दीपिका को अपने सीने से लगा लिया। दीपिका और जोर से रोने लगी। कुछ देर बाद वह शान्त हुई। माँ, बेटी दोनों चुपचाप पड़ी रहीं। थोड़ी देर बाद दीपिका सो गई। माँ उठ कर काम करने लगीं।

थोड़ी देर बाद दीपिका उठी। अब वह अपने को हल्का महसूस कर रही थी। दीपिका को उठा हुआ देख कर माँ उसके पास आ कर बैठ गई।

दीपिका ने कहा-'जो बहुत पहले कह देना चाहिए था, वह आज कह पायी।'

'कोई बात नहीं, जब जागो तभी सवेरा। एक दुःस्वप्न समझ कर भूल जाओ इस घटनाक्रम को जीवन में बहुत से उतार-चढ़ाव आते रहते हैं। अच्छा, मैंने लस्सी बनायी है, लाती हूँ।' कह कर माँ लस्सी लेने रसोई में चली गई।

दीपिका वाशरूम गई, हाथ मुँह धो कर आयी। अब वह अपने को सहज महसूस कर रही थी। माँ लस्सी लेकर आयी। दोनों ने लस्सी पी। लस्सी पीते हुए दीपिका ने कहा-'माँ! इधर कुछ दिनों में मैंने तुम्हें कितना तंग किया। क्या इसकी भरपाई मैं कर पाऊँगी?'

माँ प्यार से बोली-'कोई बात नहीं, अगर अपना दर्द माँ से नहीं कहोगी तो किससे कहोगी।'

'माँ! दुःख दर्द कहना अलग बात होती है और अकारण तुम्हारे ऊपर गुस्सा करना अलग बात है।' दीपिका दुःख के साथ बोली।

माँ ने कहा-'बेटा! अगर यही सब सोचती रहोगी तो मुश्किल में पड़ जाओगी। अपना कार्य भी सहजता से नहीं कर पाओगी। मनुष्य गलती करता है, लेकिन अगर गलती समझ में आ जाए तो उसमें सुधार हो जाता है।

और फिर, इस सन्दर्भ में तो तुम्हारी गलती भी नहीं कही जाएगी। अभिनव तुम्हारे साथ कक्षा-9 से पढ़ता

था। तुम दोनों में आपस में सहज प्रेम था। तुम्हारा चयन आई.आई.टी. में इंजीनियरिंग के लिए हो गया, उसका चयन नहीं हो पाया। अपने प्रयासों को सार्थक दिशा में आगे बढ़ाने की अपेक्षा उसने तुम्हारे में ही कमी निकालना शुरू कर दिया। तब इसमें तुम्हारा दोष कहाँ कहा जाएगा।'

'माँ! यह बात तो ठीक है, किन्तु मैं हर बात में तुम्हारे ऊपर अपना गुस्सा निकालती रही और तुम दुःखी होने पर भी सहज रूप से सहज भाव से बर्दाश्त करती रहीं।' कहते हुए दीपिका भावुक हो उठी।

माँ के पैर पकड़ते हुए वह बोली-'माँ! मुझे क्षमा कर दो।'

माँ ने दीपिका को कलेजे से लगा लिया। बोलीं-'तुम मेरी वही प्यारी दुलारी गुड़िया हो।'

माँ ने प्यार से उसके सिर पर हाथ सहलाते हुए कहा-'चलो चल कर पार्क में थोड़ा टहल आवें, मन हल्का हो जाएगा।'

'माँ! तुम जाओ, मैं थोड़ा आराम करूँगी।' कह कर दीपिका लेट जाती है।

माँ पार्क में टहलने के लिए चली गई और दीपिका की आँखों के आगे चलचित्र से घूमने लगे।

घर में केवल वह और उसकी माँ ही थे। जब वह छह माह की थी, तभी उसके पिता का देहान्त हो गया था। माँ ही उसके लिए पिता, दादी, बाबा, भाई-बहन सब कुछ थी। जबसे उसने होश संभाला माँ को हर रूप में देखा था। कभी-कभी वह और माँ दोनों सहेलियाँ बन जाते थे, तब छीन झपट कर खाना, भाई बहनों की तरह आपसी तू तू, मैं मैं सब कुछ होता था।

माँ ने उसे कभी पिता की कमी महसूस नहीं होने दी। सभी दायित्वों को निबाहने के साथ ही उसे घुमाना फिराना सब कुछ माँ ने किया।

जब दीपिका छोटी थी, तब एक बार दीपिका की नानी जी उसके घर पर आयी हुई थीं। उन्होंने दीपिका को बताया-'दीपिका! यह तो तुम्हें पता ही है कि जब तुम छह माह की थीं, तब तुम्हारे पिता का एक्सीडेंट में देहान्त हो गया था।

'हाँ नानी!'

'बेटी! तुम्हारी माँ ने तुम्हें बड़े कष्टों से पाला है। तुम्हारे पिता एक प्राइवेट कम्पनी में काम करते थे। अच्छी तनख्वाह थी। तुम्हारी माँ और पिता ने बचत करके यह घर खरीदा, जिसमें तुम लोग रहती हो। जब तुम्हारे पिता का एक्सीडेंट में देहान्त हो गया, तब आजीविका का एक बड़ा प्रश्न था क्योंकि प्राइवेट कम्पनी में पेंशन का कोई प्राविधान नहीं था।

तुम्हारी माँ पढ़ी लिखी थीं। वह चाहतीं तो किसी प्राइवेट स्कूल में नौकरी कर सकती थीं, किन्तु उन्होंने ऐसा नहीं किया, क्योंकि तुम्हारे पालन-पोषण की प्राथमिकता थी। उन्होंने एक ओर तो घर पर ही प्राइवेट ट्यूशन पढ़ाना प्रारम्भ कर दिया, दूसरी ओर अपनी जमा पूँजी से इस मकान की ऊपरी मंजिल अकेले दम पर बनवायी, ताकि उसमें किराएदार रखे जा सकें। ऊपरी मंजिल के जीने का रास्ता भी इस प्रकार बनवाया कि बाहर से रास्ता भी हो और आवश्यकता पड़ने पर अन्दर से भी खोला जा सके। ऊपरी मंजिल बन जाने के बाद तुम्हारी माँ ने उसमें किराएदार रखे।

जब नानी यह सब बता रही थीं, तब दीपिका के पड़ोस की एक दादी जी बैठी थीं। उन्होंने कहा-'सबसे बड़ी बात यह है कि यह सब करते हुए भी उसने दीपिका का पूरा ध्यान रखा। उसे कभी भी पिता, भाई, बहन या परिवार की कमी महसूस नहीं होने दी।'

दीपिका भरे गले से बोली-'माँ के लिए आज भी सबसे पहली प्राथमिकता मैं ही हूँ।'

नानी ने आगे बताया कि तुम्हारी माँ ज्योति ने सरकारी नौकरी के लिए भी आवेदन किया किन्तु केवल केन्द्रीय विद्यालय व राज्य सरकार के विद्यालयों के लिए,

अन्य किसी सरकारी नौकरी के लिए नहीं।'

जब दीपिका तीन वर्ष की थी तब उसकी माँ ज्योति जी का चयन केन्द्रीय विद्यालय में प्राथमिक शिक्षिका के पद पर हो गया। उन्हें नियुक्ति भी इस शहर में मिल गई। उन्होंने दीपिका का दाखिला एक बालगृह में करवा दिया। वह उसे वहाँ पर छोड़ती हुई अपने विद्यालय जाती थीं और घर वापस आते हुए उसे वहाँ से लेते हुए आती थीं। दीपिका को बालगृह में अपने समवयस्क बच्चों के साथ खेलने कूदने का पर्याप्त अवसर मिलता था। उसकी माँ भी विद्यालय जाने के अलावा अपना पूरा समय दीपिका को ही देती थीं।

इस तरह सहजता के वातावरण में पलते हुए दीपिका पाँच वर्ष की हो गई। माँ को इसी दिन का इंतजार था। दाखिले का समय आने पर उन्होंने उसका एडमीशन केन्द्रीय विद्यालय में ही कक्षा एक में करवा दिया। माँ के तो आनंद का ठिकाना ही नहीं था। उन्होंने दीपिका के दाखिले के बाद पूरे विद्यालय में मिठाई बाँटी। अब तो उनका साथ चौबीस घंटे का हो गया। अब उन्हें दीपिका को कहीं पर छोड़ने की आवश्यकता नहीं थी।

इसी प्रकार धीरे-धीरे बड़ी होते हुए दीपिका कक्षा नौ में पहुँच गई। उस समय उसकी आयु तेरह वर्ष की थी। उसकी कक्षा में एक नया छात्र आया। उसका नाम अभिनव था। दीपिका को अभिनव बहुत अच्छा लगता था। अभिनव के पिता जी आर्मी में थे। उनका स्थानान्तरण इसी शहर में हो गया था। स्थानान्तरण के बाद उन्हें सरकारी क्वार्टर मिल गया था। दीपिका का घर था तो सिविल एरिया में, किन्तु अभिनव के घर से बहुत दूर नहीं था।

छुट्टी के दिन कभी-कभी अभिनव और दीपिका के कुछ अन्य सहपाठी छात्र-छात्राएँ दीपिका के घर आते थे। दीपिका की माँ ज्योति जी सभी का स्वागत करती थीं व उनको प्यार से खिलाती पिलाती भी थीं। उस समय उनकी भूमिका विद्यालय की अध्यापिका की न हो कर केवल दीपिका की माँ की रहती थी।

जब भी दीपिका के मित्र आते थे, तब दीपिका की माँ ज्योति जी उनके हाल-चाल लेने व नाश्ता आदि देने के लिए ही उस कमरे में जाती थीं, फिर दूसरे कमरे में जा कर अपना काम करती थीं। कारण था कि बच्चे आपस में मिल-जुल कर खुल कर अपनी बात कर सकें।

अब दीपिका कक्षा दस में पहुँच गई थी। रक्षाबंधन आने वाला था। एक दिन दीपिका ने माँ से कहा-'माँ! मैं अभिनव को राखी बाँधना चाहती हूँ।'

'क्यों?' माँ ने पूछा।

दीपिका बोली-'माँ! वह मुझे बहुत अच्छा लगता है। मेरा कोई भाई है भी नहीं। राखी बाँधने से यह रिश्ता सदा के लिए स्थिर हो जाएगा।'

माँ ने कहा-'अभिनव तुम्हें अच्छा लगता है तो इस बात को अपने मन में रखो। राखी बाँधने की क्या जरूरत है। तुम दोनों आपस में भाई बहन समझते हो तो अच्छी बात है।'

'माँ! मैंने अभिनव से भी पूछा था। उसने कहा-'अच्छी बात है। हम लोग सदा के लिए एक पवित्र बन्धन में बँध जाएँगे।' दीपिका बोली।

माँ उसे समझाते हुए बोलीं-'बेटी इस उम्र में कई बार लड़के लड़कियों के मध्य आपसी खिंचाव होता है। और.... वह समझ नहीं पाते हैं। मैंने कई लोगों को देखा है कि वह इस स्वाभाविक खिंचाव के कारण पहले रिश्तों को मजबूत बनाने के लिए पहले राखी के बंधन में बँधते हैं, फिर प्यार बढ़ने पर एक-दूसरे से शादी करते हैं। इसलिए तुम अभिनव को राखी मत बाँधो। अगर यह प्यार विशुद्ध भाई बहन के प्यार जैसा ही हुआ, तब भी अच्छा ही है। इसके लिए राखी का बंधन आवश्यक नहीं है।'

'माँ! तुम मुझे गलत समझ रही हो।' दीपिका रुष्ट होते हुए बोली।

माँ बोलीं-'अपनी प्यारी गुड़िया को मैं गलत कैसे समझूँगी। मैं तो केवल तुम्हें समझा रही थी।'

'माँ! प्लीज माँ! मुझे अभिनव को राखी बाँधने से मत रोको। मेरी भी इच्छा होती है कि मैं किसी को भाई कह सकूँ। प्लीज माँ!' दीपिका मनुहार के साथ बोली।

'ठीक है, जैसी तुम्हारी इच्छा हो करो।' माँ ने हथियार डालते हुए कहा।

'मेरी अच्छी माँ!' दीपिका माँ से लिपटते हुए बोली।

माँ ने पूछा-'हाँ यह बताओ कि मुझे क्या व्यवस्था करनी होगी?'

'कुछ विशेष नहीं। राखी तो मैं बाजार से ले आऊँगी। बाकी खीर या मिष्ठान्न आदि जो तुम्हारी इच्छा हो बना लेना। वैसे भी हर त्योहार पर तुम घर में ही तो मिठाई आदि बनाती हो।' दीपिका खुश होते हुए बोली।

'ठीक है।' माँ ने कहा।

रक्षाबन्धन के दिन अभिनव दीपिका के घर आया। दीपिका बहुत खुश हुई। उसने सब तैयारी कर रखी थी। दीपिका ने अभिनव को राखी बाँधी, तिलक लगाया व माँ के द्वारा बनायी हुई मिठाई व खीर खिलायी। अभिनव ने उसे उपहार स्वरूप पेन दिया।

समय बीतता गया। दोनों ने ही दसवीं कक्षा की परीक्षा अच्छे अंकों के साथ उत्तीर्ण कर ली। दोनों में लगाव बढ़ता गया। दोनों ने ही ग्यारहवीं कक्षा के लिए विज्ञान वर्ग चुना। अब अभिनव दीपिका के घर अधिक आने लगा।

माँ तो माँ ही होती है। एक दिन उन्होंने दीपिका से पूछा-'दीपिका! तुम्हारी और अभिनव की दोस्ती कैसी चल रही है?'

दीपिका की आँखें झुक गईं। वह बोली-'माँ! मुझे क्षमा कर दो। तुमने पहले ही कहा था कि अभिनव के राखी मत बाँधो।'

माँ कुछ बोल न पायीं। कुछ क्षण सन्नाटा छाया रहा। दीपिका भरे गले से बोली-'माँ....! और माँ की गोद में सिर छुपा लिया।

माँ ने उसके सिर पर प्यार से हाथ फेरते हुए कहा-'चलो, अब जो होना था, हो गया। अब अपने मन से अपराधबोध की भावना हटा दो। दुःखी मत हो, लेकिन एक वादा करो।'

'क्या माँ! दीपिका कुछ डरते हुए बोली।

माँ ने प्यार से कहा-'तुम कभी भी अभिनव से एकान्त में नहीं मिलोगी; न ही मिलने के लिए रेस्तराँ, पिक्चर हॉल या पार्क आदि में जाओगी। जब भी मिलना हो, उसे घर पर बुलाओ, बातें करो।'

'ठीक है माँ! मैं वादा करती हूँ कि मैं पूर्व की भाँति घर पर ही मिलूँगी।' दीपिका ने कहा।

एक दिन अभिनव दीपिका के घर आया। उसने दीपिका से कहा-'दीपिका! मैं तुमसे कुछ कहना चाहता हूँ।'

दीपिका ने मुस्कराते हुए कहा-'मुझे पता है कि तुम क्या कहना चाहते हो।'

अभिनव बोला-'तुम ज्योतिषी हो क्या?'

'ज्योतिषी तो नहीं, लेकिन दिल की डॉक्टर हूँ।' दीपिका शरारत के साथ बोली।

'दिल की डॉक्टर? प्रश्नवाचक निगाहों से अभिनव ने दीपिका की तरफ देखा।

दीपिका खिलखिला कर हँस पड़ी व बोली-'अरे बुद्धू इतना भी नहीं समझते हो।

तभी माँ नाश्ता ले कर आ गयी। उन्होंने मुस्कुराते हुए कहा-'अरे भई, किस बात पर इतना हँस रही हो।'

अभिनव ने कहा-'आँटी! दीपिका कह रही है...'

दीपिका अभिनव को इशारा करते हुए-'अरे चुप-चुप बुद्धू!'

माँ हँसने लगीं व कहा-'अच्छा भाई मैं तो चली।' कह कर वह कमरे से बाहर चली जाती है।

माँ के जाने के बाद दीपिका अभिनव से कहती है-'तुम तो ठहरे निरे बुद्धू। माँ से बता रहे थे कि दीपिका

कह रही है कि वह दिल की डॉक्टर है।'

दिल पर हाथ रखते हुए वह बोली-'अरे खुदा! इसका दिल नहीं है क्या, जो दिल की बात को दिल से समझे।'

अभिनव अब खिलखिला कर हँस पड़ा व बोला-'अच्छा अब समझा मेरे दिल की रानी।'

दीपिका हँसते हुए-'बुद्धू कहीं के।'

'अरे जब मेरी पार्टनर बुद्धिमान है, तब मुझे क्या चिन्ता।' अभिनव ने एक्टिंग के साथ कहा।

दीपिका ने प्रश्नवाचक दृष्टि से पूछा-'तुम्हारी पार्टनर?'

अभिनव ने कहा-'अरे पगली! अभी तुम मेरी कक्षा की पार्टनर हो, मेरे दिल की पार्टनर हो और भविष्य में....

दीपिका बीच में बात काटते हुए बोली-'भविष्य में लाइफ पार्टनर'

'वाह, वाह! आखिर दोस्त किसकी है।' अभिनव ताली बजाते हुए बोला।

माँ ने आज छुट्टी होने के कारण घर के बहुत से काम निबटाये। थकी होने के कारण वह थोड़ी देर के लिए लेट गयी।

मन में विचारों का प्रवाह शुरू हो गया। दीपिका को अभिनव से मिलने-जुलने की खुली छूट दे कर उसने ठीक किया क्या? क्या दीपिका ने अभिनव को भविष्य का जीवन साथी चुन कर ठीक किया? पता नहीं क्यों माँ को अभिनव के हाव-भाव ठीक नहीं लगते थे। हालांकि उन्होंने दीपिका से कभी कुछ कहा नहीं किन्तु अभिनव उन्हें अच्छा नहीं लगता था।

दिन बीतते गए। दोनों ही कक्षा बारह की पढ़ाई के साथ-साथ आई.आई.टी. में इंजीनियरिंग में दाखिले के लिए भी तैयारी कर रहे थे। दोनों ने ही इंजीनियरिंग में दाखिले के लिए परीक्षा दी। परिणाम आया।

दीपिका का चयन हो गया, अभिनव का नहीं हो पाया। दीपिका के विद्यालय की दो लड़कियों का चयन आई. आई.टी. के लिए हुआ। एक दीपिका, दूसरी मालिनी। विद्यालय में सब लोग इन बच्चों को बधाई दे रहे थे। दीपिका की माँ ज्योति मैडम जो उसी विद्यालय में पढ़ाती थीं, उन्होंने पूरे विद्यालय में मिठाई बाँटी। घर पर भी परिचित व मित्रगण बधाई देने आ रहे थे। लेकिन.... दीपिका की आँखें तो किसी के आने का इन्तजार कर रही थीं।

पर.... वह नहीं आया। दीपिका उदास थी। माँ दीपिका की उदासी का कारण समझ रही थी। उन्होंने अभिनव को फोन किया-'अभिनव! मैं और दीपिका तुम्हारा इंतजार करते रहे, किन्तु तुम नहीं आए।'

अभिनव बड़े ही रूखे शब्दों में बोला-'हाँ आण्टी! मेरी तबियत कुछ ठीक नहीं है, इसीलिए नहीं आया।'

माँ ने कुछ चिन्तित होते हुए पूछा-'क्या हुआ? बुखार है क्या?'

'नहीं बस ऐसे ही।' अभिनव ने कहा।

'अभिनव तुम्हें पता है न कि दीपिका का चयन आई.आई.टी. में इंजीनियरिंग के लिए हो गया है।' माँ ने कहा।

'हाँ पता है।' कह कर अभिनव ने फोन काट दिया।

माँ दीपिका के सामने ही अभिनव से बात कर रही थी। दीपिका ने पूछा-'क्या कहा अभिनव ने?'

'कहा पता है और यह कह कर फोन काट दिया।' माँ बोली।

दीपिका ने कहा-'यह भी तो हो सकता है कि फोन कट गया हो, मैं मिला लूँ।'

'मिला लो।' माँ बुझे मन से बोलीं।

दीपिका ने फोन मिलाया। घंटी बजती रही, अभिनव ने नहीं उठाया। दीपिका के पास तो अपना

मोबाइल नहीं था। आवश्यकता होने पर वह माँ के मोबाइल से ही बात करती थी, किन्तु अभिनव का अपना मोबाइल था। इसलिए घर में किसी दूसरे के उठाने का प्रश्न ही नहीं था।

थोड़ी देर बाद दीपिका ने पुनः फोन मिलाया। अभिनव ने फोन उठाया। दीपिका ने कहा-'अभिनव! तुम घर नहीं आए?'

'दीपिका! क्यों मुझे चिढ़ाने के लिए बार-बार फोन कर रही हो? क्या जताना चाहती हो कि तुम बहुत होशियार हो?' अभिनव गुस्से में बोला।

दीपिका ने प्यार से कहा-'नहीं.... नहीं अभिनव! ऐसी बात नहीं है।'

'तो कैसी बात है?' अभिनव कुछ झुंझलाते हुए बोला।

'अभिनव! यह तो प्रतियोगी परीक्षा है। कभी किसी का चयन हो जाता है, किसी का नहीं। हो सकता है भविष्य में तुम आई.ए.एस. बन जाओ या किसी अच्छे पद पर पहुँच जाओ या....'

'अच्छा-अच्छा! बन्द करो अपना भाषण।' कह कर अभिनव ने फोन काट दिया।

दीपिका सन्न रह गई। वह रो भी न पायी। वह लेट गई। माँ उसके पास ही बैठ कर उसको सहलाने लगीं।

दीपिका ने माँ से कहा-'माँ मेरा दोष क्या है? मेरा चयन आई.आई.टी. में हो गया और उसका नहीं हो पाया तो इसमें मेरा क्या दोष है?'

माँ भी उसके साथ लेट गई। उन्होंने कहा-'तुम्हारा दोष नहीं है। अभिनव का भी दोष नहीं है। जरूरी नहीं है कि वह तुम्हारा चयन हो जाने पर खुश न हो किन्तु उसका चयन न हो पाने के कारण वह दुःखी है।

यह पुरुष स्वभाव है कि वह अपनी पत्नी या होने वाली जीवन संगिनी को अपने से आगे बढ़ता देख कर कुण्ठित हो जाते हैं। निश्चिन्त रहो, समय आने पर सब ठीक हो जाएगा।'

अभिनव ने सूरत जा कर कम्पटीशन की तैयारी के लिए कोचिंग ज्वाइन कर ली। आई.आई.टी. में दाखिले का समय आने पर दीपिका अपनी माँ ज्योति जी के साथ कानपुर गई। वहाँ पर उसे गर्ल्स हॉस्टल में भी दाखिला मिल गया। कैम्पस में ही केन्द्रीय विद्यालय भी था। ज्योति जी वहाँ पर भी गईं। वहाँ के स्टाफ ने उनका स्वागत भी किया और बधाई भी दी।

ज्योति जी ने बताया-'दीपिका मेरी अकेली सन्तान है, मेरे पति भी नहीं हैं। अतः यदि मेरा स्थानान्तरण यहाँ पर हो जाए, तो मैं दीपिका के साथ रह सकूँगी।'

स्टाफ के एक वरिष्ठ अध्यापक धीरज जी बोले-'मैडम! इस समय तो आपके पास बड़ा अच्छा अवसर है, यहाँ के एक प्राथमिक अध्यापक हरिकृष्ण वर्मा जी अगले माह रिटायर होने वाले हैं। आप शीघ्र ही अपने क्षेत्र के सहायक आयुक्त को यहाँ पर स्थानान्तरण के लिए पत्र लिखिए।'

ज्योति जी ने हर्षित स्वर में कहा-'धन्यवाद सर!'

ज्योति जी इलाहाबाद लौट आयीं।

इलाहाबाद लौटने के बाद जब ज्योति जी अपने विद्यालय गयीं। मध्यान्तर में जब सब लोग स्टाफ रूम में खाना खा रहे थे, तब आपसी चर्चा हुई।

प्रतिमा मैडम-'दीपिका का दाखिला आई.आई.टी. में करवा दिया?

'हाँ मैडम! सब कार्य अच्छी तरह हो गया, लेकिन कल जब मैं लौट कर आयी तो दीपिका के बिना एक दिन भी काटना मुश्किल हो गया।' ज्योति जी कुछ उदास स्वर में बोलीं।

प्रतिमा मैडम उन्हें समझाते हुए बोलीं-'ज्योति जी! चिन्ता मत करिए, हम लोग केन्द्रीय विद्यालय में हैं। हम लोगों के साथ एक प्लस प्वाइंट यह है कि सब जगह केन्द्रीय विद्यालय हैं। इसलिए हम लोग अपने इच्छित स्थान पर

स्थानान्तरण के लिए आवेदन तो कर ही सकते हैं।'

'मैं आप लोगों को इससे संबंधित अच्छी सूचना देने वाली थी कि मैं आई.आई.टी. कैम्पस कानपुर में स्थित केन्द्रीय विद्यालय में भी गई थी, वहाँ पता चला कि वहाँ पर एक प्राथमिक अध्यापक श्री हरिकृष्ण वर्मा जी अगले माह रिटायर होने वाले हैं। अतः उन लोगों ने सलाह दी कि मैं शीघ्रातिशीघ्र अपने स्थानान्तरण के लिए आवेदन कर दूँ।' ज्योति जी बोलीं।

मधु मैडम बोलीं-'बिल्कुल ठीक कहा आपने, यह तो बहुत अच्छा अवसर है। ऐसा करिए कि आप अभी ही बैठ कर प्रार्थना पत्र तैयार करिए, मेरा अगला पीरियड खाली है, मैं आपकी कक्षा ले लूँगी।'

ज्योति जी ने अपना पर्स खोल कर एक कागज निकालते हुए कहा-'पत्र तो मैं घर से ही लिख कर ले आयी हूँ। यह देखिए।'

सब लोग उस पत्र को देखने लगे। पत्र में लिखा था-

सेवा में,

सहायक आयुक्त
केन्द्रीय विद्यालय संगठन
लखनऊ सम्भाग, लखनऊ

विषय-आई.आई.टी. कानपुर में स्थित केन्द्रीय विद्यालय में स्थानान्तरण के सम्बन्ध में निवेदन रूल।

माननीय महोदय/महोदया!

विनम्र निवेदन है कि मुझे सूचित करते हुए हर्ष होता है कि मेरी इकलौती सन्तान दीपिका का चयन आई. आई.टी. कानपुर में इंजीनियरिंग की पढ़ाई के लिए हो गया है। उसका दाखिला भी वहाँ पर करवा दिया है। अभी वह हॉस्टल में रह रही है। सूचनार्थ निवेदन है कि मेरे पति नहीं हैं। अतः मैं यहाँ पर अकेले ही रह रही हूँ।

आपसे करबद्ध प्रार्थना है कि मेरा स्थानान्तरण यदि आई.आई.टी. कानपुर में स्थित केन्द्रीय विद्यालय में हो जाए तो अति कृपा होगी।

वहाँ पर स्थानान्तरण हो जाने पर मैं निश्चिन्त हो कर पूर्ववत् पूर्ण मनोयोग से अध्यापन कार्य कर सकूँगी।

सधन्यवाद! सादर-

भवदीया
ज्योति रानी

प्रमोद सर बोले-'मैडम! आपने बहुत अच्छा लिखा है। इसे आज ही प्रधानाचार्य जी को दे दीजिए। वह इसे सहायक आयुक्त महोदय को फारवर्ड कर देंगे।'

विनीता मैडम बोलीं-'ईश्वर करे आपका स्थानान्तरण कानपुर में शीघ्र ही हो जाए, जिससे आप दीपिका के साथ आनन्दपूर्वक रह सकें। लेकिन....'

'लेकिन क्या?' ज्योति जी ने पूछा।

भरे गले से विनीता मैडम बोलीं-'लेकिन हम लोगों से दूर हो जाएँगी। आप जैसा एक अच्छा साथी हम लोग खो देंगे।'

कुछ क्षण के लिए वातावरण गम्भीर हो गया। तभी इण्टरवल समाप्त होने की घण्टी बज गई।

मधु मैडम बोलीं-'ज्योति मैडम! आप अपना प्रार्थना पत्र ले कर प्राचार्य जी के पास जाइए, आपकी कक्षा मैं ले लूँगी।'

ज्योति जी अपना प्रार्थना पत्र ले कर प्राचार्य जी के पास जाती हैं। प्राचार्य जी पत्र देखते हैं।

ज्योति जी कहती हैं-'सर! आई.आई.टी. कानपुर में प्राथमिक विद्यालय के एक अध्यापक अगले महीने सेवानिवृत्त हो रहे हैं।'

प्राचार्य जी कहते हैं-'यह तो बहुत अच्छी बात है। मैं आज ही आपका प्रार्थना-पत्र टाइप करवा कर मेल करवा देता हूँ। साथ ही आपके स्थानान्तरण के लिए संस्तुति भी कर देता हूँ।'

प्राचार्य जी ज्योति जी के प्रार्थना-पत्र पर अपनी संस्तुति लिखते हैं व टाइपिस्ट को बुलाते हैं और कहते

हैं-'मदन जी! इस पत्र को तुरंत टाइप कर दीजिए व मुझसे हस्ताक्षर करवा कर इसे मेल भी कर दीजिए और स्पीड पोस्ट से भेज भी दीजिए।'

मदन जी कागज हाथ में लेते हुए कहते हैं-'जी सर!'

ज्योति जी उठ कर जाने लगती हैं।

प्राचार्य जी कहते हैं-'मैडम! अभी बैठिए। मैं तो आपका प्रार्थना पत्र अग्रसारित कर ही रहा हूँ। यदि आप उचित समझें तो छुट्टी लेकर स्वयं भी लखनऊ जा कर सहायक आयुक्त जी से मिल लीजिए और उन्हें भी वस्तुस्थिति से अवगत करवा दीजिए। कारण यह है कि आपके इच्छित स्थान पर एक अध्यापक अगले माह सेवानिवृत्त होने वाले हैं। इसलिए आपके लिए यह अच्छा अवसर है।'

ज्योति जी कहती हैं-'ठीक है सर!'

और ज्योति जी प्राचार्य जी को अवकाश के लिए प्रार्थना-पत्र दे कर लखनऊ जा कर केन्द्रीय विद्यालय संगठन के सहायक आयुक्त जी से मिल कर वस्तुस्थिति से अवगत करवाती हैं।

कुछ दिनों बाद ज्योति जी का स्थानान्तरण आई. आई.टी. कानपुर के केन्द्रीय विद्यालय में हो गया। अब दीपिका हॉस्टल में न रह कर माँ के साथ ही रहने लगी। लेकिन वह सहज नहीं रह पाती थी। वह कुण्ठित रहने लगी। माँ भी उसे परेशान देख कर कुछ कह न पाती, उन्हें कोई रास्ता समझ में न आता कि क्या किया जाए।

एक दिन दीपिका की माँ ज्योति जी ने दीपिका से कहा-'दीपिका! मैं तुमसे कुछ कहना चाहती हूँ। पूरी बात सुन लेना, बीच में मत बोलना।'

दीपिका बुझे मन से बोली-'बोलो माँ!' उसे पता था कि माँ कुछ समझाने का प्रयास करेंगी।

माँ ने कहा-'सोचो दीपिका! जो हुआ, अच्छा हुआ। मान लो विवाह के बाद तुम उससे आगे बढ़ जातीं तब क्या होता?'

दीपिका ने कहा-'विवाह तो हम दोनों के सेटल हो जाने के बाद ही होता न।'

माँ उसे दुलराते हुए बोलीं-'प्यारी बेटी! मैंने कहा था न कि पूरी बात सुन लेना, बीच में मत बोलना।'

दीपिका हँसती हुई सिर झुका कर बोलती है-'जो आज्ञा माता श्री।'

दीपिका की माँ ज्योति जी भी हँसने लगीं व बोलीं-'सेटल हो जाने के बाद भी कई बार किसी को उसके अच्छे कार्य के फलस्वरूप प्रमोशन मिल जाता है या कहीं दूसरी जगह आवेदन करने के बाद कोई अन्य बेहतर नियोजन मिल जाता है।

वैसे भी तुम एक लेखिका भी हो, संभावना यह भी हो सकती है कि तुम्हें कोई बड़ा पुरस्कार मिल जाता।

दीपिका खिलखिला कर हँस पड़ी। अरे माँ अगर मेरे जैसे लेखकों को पुरस्कार मिलने लगे तो....।' दीपिका पुनः जोर से हँसी।

धीरे-धीरे दीपिका सामान्य होने लगी। कुछ दिनों बाद दीपिका ने किसी दूसरे नम्बर से अभिनव को फोन किया।

अभिनव ने फोन उठाया।

दीपिका ने कहा-'अभिनव! मेरे और तुम्हारे रास्ते अलग-अलग हैं।'

अभिनव बोला-'क्यों?'

'तुम खुद सोचो। आई.आई.टी. में मेरे इंजीनियरिंग में चयन के बाद तुम्हें मेरे में अवगुण ही अवगुण दिखाई देने लगे। आज के बाद अब फिर न ही फोन करना, न ही मिलना।'

'तुम मेरे नहीं हो।'

सी-1631/7, राजाजीपुरम्
लखनऊ-226017 उ.प्र.
मो.- 8882161295

दोगुना दहेज

➲ शिव मोहन यादव

सुंदरता के साथ सभ्यता, शालीनता और शीलता हो, तो रूप का निखार अप्रतिम हो जाता है। सुंदरता ने कभी किसी से भेदभाव नहीं किया है साहब, कि अमीर उसे जी भर पा लें और गरीब के हिस्से में आये ही नहीं। यही बात मोनिका के साथ भी है। वह जरा-सी सांवली है तो क्या! कौन होगा, जो उसे एक बार देखने के बाद दुबारा मुड़कर न देखे।

उसके पिता ने कितने जतन करके उसे कॉलेज में दाखिल कराया है। वे जानते हैं कि पढ़ी-लिखी लड़की घर को कितना आगे ले जा सकती है। लेकिन, जब घर में धन न हो, तो इस समाज में बेटी का विवाह कर पाना कितना कठिन काम है, इसे बालकराम से ज्यादा अच्छी तरह भला कौन जानता होगा।

'मोनिका, जल्दी डॉक्टर साहब को फोन लगा। तेरे पापा को बहुत तेज बुखार है।'- वह जैसे ही कॉलेज से घर पहुँची, तो मम्मी की आवाज सुनकर आवाक् रह गई। देखा मम्मी गीला कपड़ा पापा के सिर पर रख रही हैं। वह पापा की तरफ बढ़ी ही थी कि मम्मी फिर बोलीं-'अरे बिटिया, पहले डॉक्टर साहब को फोन कर दो ना!'

'ठीक है मम्मी', कहते हुए वह फोन लेने के लिए आले की तरफ दौड़ी।

'अरे वहाँ कहाँ जा रही है, यह रखा है फोन। ये ले।'-फोन मोनिका की तरफ बढ़ाते हुए उसकी माँ ने कहा। उसने फोन लिया और अब पुरानी वाली कॉपी लेने दौड़ी।

'अब कहाँ दौड़ दी, ये रखी है कॉपी। जल्दी मिला नम्बर।'-कहते हुए उन्होंने उसे कॉपी भी थमा दी। मोनिका ने जल्दी से नम्बर डायल किया-'हैलो डॉक्टर साहब!'

'हैलो! कौन?'-दूसरी तरफ से आवाज आयी।

'मैं बोल रही हूँ श्री बालकराम की बिटिया। पिताजी बहुत बीमार हैं, उन्हें बुखार है। आप डॉक्टर साहब ही बोल रहे हैं न!'-मोनिका ने एक साँस में सब बताकर पूछ भी लिया।

दूसरी ओर से आवाज आयी-'ये नम्बर डॉक्टर साहब का नहीं है। उनका नम्बर बदल गया है। आठ महीने से यह नम्बर मेरे पास है। लेकिन आप चिंता मत कीजिये, मैं उन्हें फोन करके बता दूँगा। आप कहाँ से बोल रही हैं।'

'वो, वो मैं तो पहाड़ी नगला से बोल रही हूँ। लेकिन मैं आपको नहीं पहचानती, माफ कीजिये, गलत नंबर लग गया।'-कहते हुए वह फोन रखने ही वाली थी कि आवाज आयी-'सुनिये तो, डॉक्टर साहब मेरे परिचित हैं। मैं उन्हें पहाड़ी नगला भेज रहा हूँ। श्री बालकराम जी के घर न!'-दूसरी तरफ से आवाज आयी।

मोनिका ने सकुचाते हुए कहा-'हाँ।'

इतना सुनकर फोन दूसरी ओर से काट दिया

गया। कुछ ही देर में बालकराम का फोन घनघनाने लगा। मोनिका ने उठाया-'हाँ हैलो, मैं डॉक्टर देवेन्द्र बोल रहा हूँ।'

'डॉक्टर साहब, मैं श्री बालकराम की बिटिया बोल रही हूँ, पहाड़ी नगला से। जल्दी आ जाइये, पिताजी को तेज बुखार है।'-मोनिका ने कहा।

'ठीक है, तुम चिन्ता मत करो, मैं आ रहा हूँ, बस बीस मिनट।'-कहते हुए डॉक्टर साहब ने फोन की लाल बटन दबाई और उसे जेब में रख लिया। मोनिका बहुत चाहती है अपने पापा को। मम्मी-पापा के अलावा है ही कौन उसका! वह आज स्तब्ध है। धीरे-धीरे पापा के पास पहुँची और उनका हाथ छूकर देखा तो उनका शरीर आग की तरह जल रहा था। वह तुरंत अपने पिता को उलाहना देने लगी-'कितनी बाहर कहा है पापा, दोपहर में काम मत किया करो, लेकिन आप हो कि मानते ही नहीं। जानते हो कि गर्मी बहुत हो रही है, फिर भी लगे रहते हो दोपहर में। क्या करोगे इतना कमाकर! जब सुबह-शाम के काम से दाल-रोटी का हिल्ला हो जाता है, तो क्या जरूरत है दोपहर में तपने की? आज के बाद दोपहर में जंगल में नहीं जाओगे।....' मोनिका की शिकायती डाँट पर उसके पिता चुप थे। रहते भी क्यों नहीं, वह कॉलेज जाने से पहले कह भी तो गई थी कि पापा आप जंगल में नहीं जाना।

'अरी पगली, किसके लिये लगे रहते हैं सुबह-दोपहर-शाम! सब तेरे लिये ही तो कर रहे हैं, और तू है कि उल्टा बोल रही है।'-मम्मी ने बीच ही उसे टोका।

'तो क्यों कर रहे हैं, मम्मी। मैं क्या सिर पर लेकर जाऊँगी? ये सब आपकी लापरवाही है, आप उन्हें जाने जो देती हैं।'-मोनिका ने उसी तीखे स्वर में ही मम्मी से भी कह डाला। मम्मी थोड़ी देर के लिये शान्त हुईं, फिर धीरे से बोलीं-'पिछले दो सालों से पाई-पाई जोड़ रहे हैं तेरी शादी के लिये, कि कोई अच्छा लड़का मिल जाये....'

'मुझे नहीं करना शादी-ब्याह! ऐसी कमाई का क्या करें कि मेरे पापा की जान पर बन आये। कह देना, जिसे बिना दहेज के ब्याह करना हो, वो ले जाये मुझे।'

तभी पापा ने उसे खटिया पर बैठने को कहा। वह पाटी पर बैठ गई। उसकी आँखों में आँसू थे। पापा ने उसके सिर पर हाथ फेरा और लड़खड़ाती-सी आवाज में बोले-'बेटा, तू पढ़ी-लिखी है। बी.ए. कर रही है। बिना दहेज के कौन कर लेगा तुझसे शादी?'

'जो दहेज नहीं लेगा, मैं उसी से कर लूँगी।'-वह गर्व-सी स्थिति में आँखों में आँसू लेकर बोली।

'कोई लूला-लंगड़ा ही मिलेगा!'-पापा ने उसे हँसाने की नीयत से मायूस चेहरे पर हंसी लाने की असफल कोशिश करते हुए कहा।

'हाँ, मैं कर लूँगी लूले-लंगड़े से शादी। कर लूँगी।'- मोनिका आँसू छिपाते हुए बोली और फिर तेजी से रोते हुए बोली-'लेकिन आज से आप दोपहर के समय जंगल में लकड़ी काटने नहीं जायेंगे।'

बिटिया के कर्णप्रिय, मार्मिक बोल सुनकर माँ-पिता दोनों की आँखों में आँसू छलक आये। बालकराम तो रो पड़े। आँखें पोंछते हुए उन्होंने अपनी लाड़ली को अपनी ओर खींचा और उसका माथा चूम लिया। बोले-'बिटिया, हमें तुम पर गर्व है।'

पापा की बातें सुनकर वह उनसे लिपट गई-'पापा, मुझसे वादा करो कि कभी दोपहर के समय जंगल नहीं जाओगे।'

'बेटा, नहीं जायेंगे।'-बालकराम ने उसे सांत्वना देते हुए कहा। तीनों ओर अश्रु धाराएँ बह रही थीं।

तभी वह उनसे दूर होती हुई बोली-'अगर आपने मेरी बात नहीं मानी और आप जंगल गये, तो मैं कॉलेज नहीं जाऊँगी। यहीं आपकी रखवाली करुँगी।' मोनिका ने आँसू पोंछते हुए कहा।

'हाँ-हाँ, ठीक है, बोला न....'

इतने में बाहर फटफटिया की आवाज सुनाई दी। मम्मी अपनी आँखें पोंछती हुई बोलीं-'देखो तो बिटिया, डॉक्टर साहब आ गये। पिता-पुत्री ने भी आँखें पोंछी। मोनिका ने डॉक्टर साहब के लिए काठ की कुर्सी डाल दी।

डॉक्टर साहब अन्दर आये। कुर्सी पर दवाओं से भरा अपना बैग रखा और बालकराम से उनका हाल पूछते हुये बोले-'कैसे हो बालकराम?'

'ठीक ही तो नहीं हूँ डॉक्टर साहब! देखिये, आखिर क्या दिक्कत है? तीन दिन से बुखार आ रहा है, आज तो इसने चारपाई पर ला दिया।'

'अरे, तुम्हें तो बहुत तेज बुखार है। पहले इसे उतारना होगा, तुरंत इंजक्शन लगाना सही नहीं होगा।'-कहते हुए उन्होंने बैग के एक हिस्से से दो थैलियाँ निकालीं और दोनों से एक-एक टिकिया उन्हें देते हुए बोले-'कुछ खा चुके हो तो लीजिए, अभी दोनों टिकियाँ निगल जाओ।'

'हाँ, थोड़ी देर पहले आधी रोटी खा ली थी।'-कहते हुए उन्होंने पानी से दवा की खुराक गले के नीचे उतार ली। दवा खाने के बाद उन्होंने पूछा-'डाक्टर साहब, ये आपका नम्बर कहाँ लग जाता है?'

'हाँ भाई, आठ-दस माह पहले मेरा मोबाइल नम्बर जाने कैसे बंद हो गया, और उसे मेरे एक परिचित लड़के ने निकलवा लिया। आपकी ही बिरादरी का है। बड़ा अच्छा लड़का है, जब भी उसके पास किसी का फोन जाता है, वह तुरंत बता देता है।'-डॉक्टर साहब ने बताया।

तभी मोनिका ने अंदर से आकर उनका अभिवादन किया और उनके सामने जलपान रख दिया।

'अच्छा-अच्छा। सच में अच्छा लड़का है, वरना आप तक हमारी खबर ही नहीं पहुँच पाती।'-बालकराम ने कहा। इसके बाद वे मुस्कुरा दिये।

बालकराम का इलाज हुआ और डॉक्टर साहब ने मोनिका का शिष्टाचार देखकर उसकी प्रशंसा की। वे चलने लगे तो बालकराम बोले-'डॉ. साहब, आप इसकी तारीफ करते हो, लेकिन मेरी बिटिया तो कहती है उसे बिना दहेज वाला लड़का चाहिए, चाहे वह लूला, लंगड़ा ही क्यों न हो।'

इतना सुनकर मोनिका तो अंदर चली गई, लेकिन डॉ. साहब हंसे और बोले-'कैसे बाप हो? इतनी पढ़ी-लिखी, सुंदर और शिष्ट बिटिया की शादी आप....'

'अरे डॉ. साहब, मैं नहीं....'

'तुम चिन्ता मत करो, अब बिटिया के लिये लड़का मैं देखूँगा। मेरी नजर में एक-दो अच्छे लड़के हैं। लूला-लंगड़ा नहीं, मोनिका बिटिया की तरह ही शिक्षित और सभ्य लड़का बताएंगे आपको।'-डॉक्टर साहब ने बहुत गंभीरता से यह सब कहा।

यह सुनकर दोनों पति-पत्नी एक-दूसरे को देखते ही रह गयें बालकराम ने डॉक्टर साहब का हाथ पकड़ा और चूम लिया। बोले-'भगवान करें, बिटिया के हाथ पीले कर लें, फिर मुझे चाहे जो हो।'

'अरे, परेशान न हो, आप भी ठीक होंगे और बिटिया के हाथ भी पीले होंगे।'

अब डॉ. साहब तो जा चुके थे और बिटिया की शादी की कुछ चिन्ताएँ जैसे समेट ले गये थे। आज कई दिनों बाद दोनों को चैन की नींद आयी थी, क्योंकि डॉ. साहब डॉक्टरी के साथ सामाजिक सरोकारों से अधिक जुड़े रहते हैं। उन्होंने जो कह दिया, समझो पत्थर की लकीर है।

दो-तीन दिन बाद, डॉक्टर साहब दो अन्य लोगों के साथ बालकराम के घर पर आ पहुँचे। डॉ. साहब ने उनकी खैरियत पूछी-'कैसे हैं आप?'

'डॉक्टर साहब, मेरे लिए तो आप भगवान हैं। अब तो मैं चंगा हो गया हूँ। आइये, आप लोग बैठिए।'-कहते हुए तीनों लोगों को चारपाई पर बैठाया। मोनिका को तो उनका आतिथ्य सत्कार करना ही था।

डॉ. देवेन्द्र ने रहस्य से पर्दा उठाते हुए कहा-'ये हैं चरनदास जी चोपड़ और ये है इनका बेटा शिवम चोपड़। अब चरनदास की ओर मुखातिब होकर बोले-'और इनके बारे में तो बता ही चुके हैं, ये हैं बालकराम जी और वह रही उनकी सुपुत्री मोनिका। वैसे दोनों परिवारों को जानता हूँ कि दोनों परिवार शिष्ट हैं। बालकराम जी के पास देने के लिये अधिक है नहीं और चरनदास जी के पास कोई कमी नहीं है। संबंध की बात के लिए इतना जरूर जानता हूँ कि बच्चों की जोड़ी नायाब रहेगी। भई अब आप लोग आपस में बात कर लें।'

'बात कोई खास नहीं है, बालकराम जी, पहले ये बताइये, आप करते क्या हैं?'-चरनदास ने पूछा।

'साहब, कुछ खास नहीं। यहाँ के जंगल से लकड़ी काटकर बाजार में बेच देते हैं और उसी से खाना खर्चा चल जाता है।'-बालकराम ने बताया।

'अच्छा, आप कितने दिनों से ये काम कर रहे हैं?'

'यही कोई तीन साल से।'

'तो अब तक आपने लकड़हारे वाले अपने व्यवसाय से बहुत धन कमा लिया होगा?'

'कुछ ज्यादा नहीं साहब, बस दाल रोटी ही चल पाती है। थोड़ा-बहुत बचा पा रहे हैं, ताकि जोड़-जोड़कर बिटिया के पाँव पूज सकें।'

'वैसे तो कोई नहीं कहता कि वह धनवान है, फिर भी आप ये बताएँ कि आप दिन भर में कितने पेड़ काट लेते हैं?'-चरनदास ने पूछा।

'अकेला हूँ साहब, बड़े-बड़े पेड़ हैं। दिनभर में एक पेड़ काटना भी मुश्किल हो जाता है।'

'अच्छा, तो अच्छी-खासी कीमत मिल जाती होगी एक पेड़ की।'

चरनदास ने जब पैसों की बात पूछी तो बालकराम असहज हुए। उन्हें लगा कि ये दहेज की मोटी रकम चाहते होंगे। बोले-'बहुत मुसीबत में लकड़ी का धंधा हो पाता है साहब। वन-विभाग से लेकर पुलिस वालों तक को हिस्सा देना पड़ता है साहब। बचत तो नाममात्र की हो पाती है, क्योंकि मेहनत ही मुश्किल से वसूल हो पाती है।'

'ओह! हम सोच रहे थे कि इससे आपकी अच्छी कमाई हो जाती होगी। लेकिन आपने तो कई बातें बता दीं। तो क्या हम जो दहेज चाहते हैं, वह आप कर पायेंगे या..।'

इतनी बात सुनकर बालकराम अचंभित से डॉ. साहब के मुँह की ओर देखने लगे। डॉ. साहब भी चिन्तित थे कि चरनदास भी दहेज के लालची हो गये। बालकराम तो सन्न थे। आखिर उनके पास इतनी रकम तो है नहीं कि एक करोड़पति को लाखों दे सकें, उनके पास तो कुछ हजार ही थे, वे भी मुश्किल से कमाये हुए। डॉ. साहब ने पूछा-'आखिर कितनी माँग है आपकी?'

'दोगुनी।'-चरनदास बोले।

बालकराम स्तब्ध थे, उन्होंने आश्चर्य से दबी आवाज में पूछा-'क्या मतलब? मैं समझा नहीं।'

चरनदास ने बताना शुरू किया-'अभी तक आपने एक हजार से अधिक पेड़ काटे हैं। है न!....'

'हाँ, लेकिन बचत तो....'

'हमें बचत से मतलब नहीं है। आपने एक हजार पेड़ काटे हैं, इसलिये आपको दहेज के रूप में दो हजार पौधे लगाने होंगे। और हाँ, उनकी देखभाल भी करनी होगी। साथ ही ये भी प्रण लेना होगा कि आप आगे कभी पेड़ नहीं काटेंगे।'

यह सुनकर तो बालकराम की बाँछें खिल गईं। बालकराम को अभी तक बेटी के विवाह की चिंता में गम ही मिले थे, लेकिन आज उन्हें असीम खुशी का अनुभव हो रहा था। खुशी और गम एक-दूसरे के कट्टर विरोधी हैं, लेकिन जब दोनों का मिलन होता है तो यह आनंद का

अवर्णनीय पल बन जाता है।

उनको अभी तक पेड़ की महत्ता के बारे में कुछ लोगों ने बताया था, स्वयं उसकी बेटी ने भी कई बार उन्हें मना किया था कि पेड़ नहीं काटने चाहिए। उन्होंने तर्क दे दिया था कि 'घोड़ा घास से दोस्ती करेगा, तो खायेगा क्या।' लेकिन बालकराम ने पौधरोपण की महत्ता बिना किसी के समझाये आज सही से समझी थी। बालकराम यह जानकर खुश था कि उसकी बेटी की तरह ही उसका भावी ससुराल पक्ष भी पेड़ों की महत्ता समझता है। अब क्या था, उसे रिश्ता मंजूर ही था, उसने यह अनोखा दहेज सहर्ष स्वीकार कर लिया।

ग्राम-नेरा कृपालपुर, पोस्ट-गौरीकरन,
जिला-कानपुर देहात-209115 (उ.प्र.)
मो.- 9616926050

क्या आकुल अन्तर?
गाती रहती जो प्रतिक्षण!
क्या दारुण सुन्दर?
बनती रहती जो मोहन!
छाया सरिता-सी
बहती रहती हो निःस्वर,
नीरव लहरों में जगा
अतल के संवेदन!
सोया निचले तल में
प्रकाश-जो केवल तम,
श्रोणि-देश
प्राणों के जीवन का मादन!
प्रिय स्वर्ण मांस के स्पन्दित
ऊपर शुभ्र शिखर
जिन पर स्वप्नों के मुकुलों का
अपलक मधुवन!

-सुमित्रानन्दन पन्त